Con. 3. X.9.49
320

अंक 10
संख्या 9

रविवार
16 अक्तूबर
सन् 1949 ई.

सत्यमेव जयते

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

संविधान का मसौदा–(जारी) 3237-3332
[अनुच्छेद 264 क, 274 घघ और 302 कक पर विचार]
[अनुसूची 3 और अनुच्छेद 13, 16, 27, 42, 280 क, 85, 111, 112, 203, 122, 130, 169, 213 क, और 215 क पर विचार]

भारतीय संविधान सभा

रविवार 16 अक्तूबर, 1949

भारतीय संविधान सभा, कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली, में प्रातः 10 बजे अध्यक्ष महोदय (माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में समवेत् हुई।

संविधान का मसौदा (जारी)

***अध्यक्षः** कार्यावली में बहुत से अनुच्छेद हैं। उनमें से कुछ विवादास्पद हैं और अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। उन पर शायद वाद-विवाद कुछ समय ले, किन्तु अन्य अनुच्छेद लगभग औपचारिक ही हैं। मैं कठिन तथा विवादास्पद अनुच्छेदों को पहले लेना चाहता हूं, जिससे कि हम उन्हें निबटा दें और फिर उन संशोधनों को ले लें जो केवल औपचारिक ही हैं। क्या हम 264क से आरंभ करें, डॉ. अम्बेडकर? क्या आपके लिये यह ठीक रहेगा?

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल : मुस्लिम): क्या मैं यह बता सकता हूं कि ये संशोधन हमारे पास आज प्रातः काल सवा नौ बजे पहुंचे थे और मुझे सभा को आते समय मार्ग में पढ़ने पड़े थे।

***अध्यक्षः** सवा नौ बजे? वे कल रात को भेज दिये गये थे।

***कुछ माननीय सदस्यः** हमें वे नौ बजे प्रातःकाल मिले।

***श्री महावीर त्यागी** (संयुक्त प्रांत : जनरल): मेरा सुझाव यह है कि इस अनुच्छेद को दोपहर बाद ले लिया जाये, श्रीमान।

***अध्यक्षः** दोपहर बाद शायद हम सत्र ही न करें। ऐसी स्थिति में मेरी समझ में नहीं आता कि क्या किया जाये।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** यह बहुत उलझे हुए अनुच्छेद हैं और उनसे कई विनिश्चयों पर जो सदन पहले कर चुका है पुनः विचार आरंभ हो जायेगा।

***अध्यक्षः** अनुच्छेद 264 क कई दिनों से हमारे सामने है; 274घघ भी कई दिनों से है; अनुच्छेद 302कक के विषय में भी यही बात है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** मैं आज की कार्यावली के विषय में सामान्य रूप से कह रहा हूं। उनमें से अधिकांश में वे मामले पुनः उपस्थित हो जायेंगे जिन पर सदन पहले ही विचार कर चुका है। किसी के लिये, तीक्ष्णतम बुद्धि वाले के लिये भी इन परिवर्तनों को इतने समय में समझना कठिन है। ऐसा कोई संकेत नहीं किया गया है कि क्या परिवर्तन किये जाने हैं।

***अध्यक्ष:** निस्संदेह मैं समझता हूं कि अनुच्छेद 280क तो निस्संदेह नया अनुच्छेद है जो आज ही आया है। किन्तु अन्य अनुच्छेद कई दिनों से कार्यावली में चले आ रहे हैं।

***श्री एच.जे. खांडेकर** (मध्य प्रदेश और बरार : जनरल): 264क बिल्कुल नया अनुच्छेद है और हमारे पास इसकी सूचना आज 9 बजे पहुंची थी। इस अनुच्छेद पर संशोधन भेजना तो असंभव ही है। अत: मेरी प्रार्थना है कि इसे दोपहर बाद या कल लिया जाये।

***अध्यक्ष:** इसका अर्थ यह है कि हमें सत्र को दो तीन दिन के लिये बढ़ाना पड़ेगा। मेरे विचार में यह ठीक नहीं रहेगा। हम अनुच्छेद 264क को लेते हैं।

अनुच्छेद 264क

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई : जनरल): श्रीमान, मैं संशोधन सं. 425 को पेश करता हूं।

"कि सूची 13 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 307 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 264क के स्थान पर निम्न रख दिया जाये:

'264A. (1) No law of a State shall impose, or authorise the imposition of, a tax on the sale or purchase of goods where such sale or purchase takes place—

Restriction as to imposition of tax on the sale or purchase of goods.

(a) outside the State; or

(b) in the course of the import of the goods into, or export of the goods out of, the territory of India.

Explanation.—For the purposes of sub-clause (a) of this clause a sale or purchase shall be deemed to have taken place in the State in which the goods have actually been delivered as a direct result of such sale or purchase for the purpose of consumption in that State, notwithstanding the fact that under the general law relating to sale of goods the property in the goods has by reason of such sale or purchase passed in another State.

(2) Except in so far as Parliament may by law otherwise provide, no law of a State shall impose, or authorise

the imposition of, a tax on the sale or purchase of any goods where such sale or purchase taken place in the course of inter-State trade or commerce:

Provided that the President may by order direct that any tax on the sale or purchase of goods which was being lawfully levied by the Government of any State immediately before the commencement of this Constitution shall, notwithstanding that the imposition of such tax is contrary to the provisions of this clause, continue to be levied until the thirty-first day of March, 1951.

(3) No law made by the Legislature of a State imposing, or authorising the imposition of, a tax on the sale or purchase of any such goods as have been declared by Parliament by law to be essential for the life of the community shall have effect unless it has been reserved for the consideration of the President and has received his assent.'

[264क.(1) राज्य की कोई विधि, वस्तुओं के क्रय और विक्रय पर, जहां ऐसा क्रय या विक्रय: वस्तुओं के क्रय या विक्रय पर करारोप के बारे में निर्बन्धन

(क) राज्य के बाहर, अथवा

(ख) भारत राज्य-क्षेत्र में वस्तुओं के आयात अथवा उसके बाहर निर्यात के दौरान में, होता है वहां कोई करारोपण, न करेगी और न करना प्राधिकृत करेगी।

व्याख्या.—उपखंड (1) के प्रयोजनों के लिये क्रय या विक्रय उस राज्य में हुआ समझा जायेगा जिसमें ऐसे क्रय या विक्रय के परिणामस्वरूप उसी राज्य में उपयोग के लिये वस्तुओं का भुगतान उस राज्य में किया गया है चाहे फिर वस्तु-विक्रय सम्बन्धी साधारण विधि के अधीन उन वस्तुओं का स्वत्व हस्तान्तरण ऐसे क्रय या विक्रय के कारण किसी दूसरे राज्य में क्यों न हो चुका हो।

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

(2) जहां तक संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबन्धित करे उसके अतिरिक्त राज्य की कोई विधि किन्हीं वस्तुओं के क्रय या विक्रय पर वहां कोई करारोपण न करेगी और न करना प्राधिकृत करेगी जहां ऐसा क्रय-विक्रय अन्तर्राज्यिक व्यापार या वाणिज्य के दौरान में होता है:

परन्तु राष्ट्रपति आदेश द्वारा निर्देश दे सकेगा कि वस्तुओं के क्रय या विक्रय पर कोई कर जो किसी राज्य की सरकार द्वारा इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले विधिवत् उद्गृहीत किया जा रहा था, इस बात के होते हुए भी कि ऐसे कर का आरोपण इस खंड के उपबन्धों के प्रतिकूल है, 1951 के मार्च के 31वें दिन तक उद्गृहीत किया जाता रहेगा।

(3) किसी राज्य के विधान-मंडल द्वारा निर्मित कोई विधि ऐसी वस्तुओं के, जो संसद द्वारा समुदाय के जीवन के लिये आवश्यक घोषित की गई हैं, क्रय या विक्रय पर करारोपण करती या करना प्राधिकृत करती है, तब तक प्रभावी न होगी जब तक कि राष्ट्रपति के विचार के लिये रक्षित किये जाने पर उसे उसकी अनुमति प्राप्त न हो गई हो।]"

श्रीमान, जैसा कि सबको ज्ञात है, विक्रय कर से भारत भर में व्यापार तथा वाणिज्य के विषय में बहुत कठिनाई हो गई है। यह पता लगा है कि बहुत से विक्रयकरों से, जो विविध प्रांतीय सरकारों ने लगाये हैं, या तो आयात अथवा निर्यात होने वाले माल में कमी हो गई है, या अन्तर्राज्यिक व्यापार अथवा वाणिज्य में कमी हो गई है। यह मान लिया गया है कि इस प्रकार की अराजकता को चलने नहीं देना चाहिये और प्रांतों को विक्रय-कर लगाने की स्वतंत्रता तो होनी चाहिये किन्तु कुछ ऐसे विनियम भी होने चाहियें जिससे कि प्रांतों द्वारा आरोपित विक्रय-कर उन उचित सीमाओं में रहेगा जो विक्रय-कर के लिये होनी चाहिये। अतः यह अनुभव किया जाता है कि कुछ विशिष्ट उपबंध होना चाहिये जिससे विक्रय-कर लगाने की प्रांतों की शक्ति पर कुछ सीमाएं लगा दी जायें।

पहली बार जो मैं सदन को बताना चाहता हूं वह यह है कि इस अनुच्छेद 264क में कुछ उपबंध हैं जो संविधान के विविध भागों की नकल ही हैं। उदाहरण के लिये, मेरे द्वारा प्रस्थापित अनुच्छेद 264क के उप-खण्ड (1) में, उप-खण्ड (ख) संविधान के उस अनुच्छेद की नकल ही है—विधायी सूची की प्रविष्टि कि आयात तथा निर्यात पर करारोपण केन्द्रीय सरकार का अनन्य क्षेत्र होगा। अतएव जहां तक उप-खण्ड (1) (ख) का संबंध है, कोई विवाद हो ही नहीं सकता कि यह प्रांतों के विक्रय कर लगाने के अधिकार का किसी अर्थ में भी अपहरण है।

इसी प्रकार उप-खंड (2) भी भाग 10क की पुनरावृत्ति है जिसे हमने हाल ही में पारित किया था और जो अंतर्राज्यिक वाणिज्य तथा व्यापार के उपबंधों के विषय में है। अतएव उपखंड (2) में भी कोई नई बात नहीं है। इसमें यही लिखा है कि यदि कोई विक्रय कर लगाया जायेगा तो वह भाग 10क के उपबंधों के विपरीत नहीं होगा।

उप-खंड (3) के विषय में यह स्वीकार कर लिया गया है कि कुछ ऐसी वस्तुएं हैं जो भारत भर में जनता के जीवनार्थ इतनी अपेक्षित हैं कि उन पर उन

प्रांतों द्वारा कर नहीं लगाया जाना चाहिये जिनमें वे पैदा होती हैं। अतः यह अनुभव किया गया कि यदि ऐसी वस्तु है, जो भारत भर में जनता के जीवनार्थ अपेक्षित हो, तो यह आवश्यक है कि सम्बद्ध प्रांत उस वस्तु पर कर लगाये इससे पूर्व, प्रांत द्वारा निर्मित विधि पर राष्ट्रपति की अनुमति मिलनी चाहिये ताकि राष्ट्रपति तथा केन्द्रीय सरकार यह देख सकें कि उस करारोपण से, जो वह प्रांत विशेष लगाना चाहता है, कोई कठिनाई न हो।

उपखंड (2) का परन्तुक भी महत्वपूर्ण है और सदन का ध्यान उस ओर आकृष्ट किया जा सकता है। यह बिल्कुल सत्य है कि कुछ विक्रय कर जो प्रांतों ने लगाये हैं अनुच्छेद 264क में समाविष्ट उपबंधों से सर्वथा संगत नहीं हैं। वे शायद उपबंधों से आगे बढ़ गये हैं। अतएव यह अनुभव किया जाता है कि जब संविधान का यह विधि-नियम लागू हो तब संविधान के उपबंधों से असंगत सब विधियां समाप्त हो जायेंगी। संविधान के आरंभ के दिन इससे विविध प्रांतों को, जिनमें ऐसे कर हैं तथा जिनके वित्त उनकी आय पर कुछ हद तक निर्भर हैं, कुछ वित्तीय कठिनाई हो जायेगी। इसलिये इस संविधान के सामान्य उपबंधों की व्याख्या के रूप में यह प्रस्थापना है कि चाहे किसी प्रांत द्वारा आरोपित विक्रय कर अनुच्छेद 264क के उपबंधों से असंगत हो, फिर भी वह विधि 31 मार्च 1951 तक लागू रहेगी, अर्थात् हम प्रांतों को कुछ मास और देना चाहते हैं जिसमें वे ऐसे फेर-बदल कर सकें जो उन्हें अपनी विधि को इस अनुच्छेद के उपबन्धों से संगत बनाने के लिये करने होंगे।

मैं नहीं समझता कि मेरे संशोधन के विषय में अधिक व्याख्या की आवश्यकता है किन्तु यदि कोई प्रश्न उठाया जायेगा तो मैं वाद-विवाद का उत्तर देते समय उस पर सहर्ष प्रकाश डालूंगा।

(संशोधन सं. 426 तथा 427 पेश नहीं किये गये।)

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्त प्रांत : जनरल): श्रीमान, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि संशोधन सं. 425 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 264क के खंड (1) की व्याख्या में, 'for the purpose of consumption in that State' ये शब्द हटा दिये जायें, और अन्त में निम्न नया खंड जोड़ दिया जाये:-

'(4) The Union Parliament shall have power to amend the laws in respect of taxes on sale or purchase of goods with a view to bring uniformity in the laws made by the various States of the Union or in the interests of the Union as a whole, provided that no Bill for such amendment shall be moved in Parliament without the prior permission of the President, and the President before giving such permission shall obtain the views of the Governments of the various States concerned.'

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

[(4) संघ संसद की शक्ति होगी कि वह माल के क्रय या विक्रय पर करों के विषय में विधियों को संशोधित कर सके जिससे कि संघ के विविध राज्यों द्वारा निर्मित विधियों में या समस्त संघ के हितों में एकरूपता लाई जा सके, परन्तु ऐसे संशोधनों के लिये कोई विधेयक संसद में राष्ट्रपति की पूर्व अनुमति के बिना पेश नहीं किया जायेगा, और राष्ट्रपति ऐसी अनुमति देने से पूर्व विविध सम्बद्ध राज्यों की सरकारों के विचारों का पता लगायेगा।]"

श्रीमान, यह संशोधन सं. 425 पहले के संशोधन सं. 307 के रूपभेद के रूप में है। यह कुछ अधिक व्यापक है और इसमें उन आपत्तियों का निराकरण किया गया है जो उस अनुच्छेद पर उठाई गई थीं। किन्तु मैं अनुभव करता हूं कि डॉ. अम्बेडकर द्वारा पेश किया गया अनुच्छेद भी बहुत त्रुटिपूर्ण है, और इसका प्रभाव यह होगा कि कई प्रांतों की आय कुछ करोड़ रुपये कम हो जायेगी।

डॉ. अम्बेडकर ने हमारे समक्ष जो सिद्धान्त रखे हैं वे सरल हैं। पहली बात, निर्यात तथा आयात पर विक्रय-कर नहीं लगेगा; दूसरी बात, अंतर्राज्यिक व्यापार पर विक्रय-कर नहीं लगेगा; और तीसरी बात, जीवन की आवश्यक वस्तुओं पर विक्रय कर राष्ट्रपति के अनुमोदन के बिना नहीं लगेगा। किन्तु खंड (1) में, आयात तथा निर्यात की वस्तुओं पर विक्रय कर लगाने के विषय में राज्यों की शक्ति पर निर्बंधन लगाये जाने हैं; चाहे उसकी दर एक पैसा प्रति मन ही क्यों न हो। इसका परिणाम यह होगा कि कई प्रांतों की राजस्व की बड़ी-बड़ी राशियां उनके साथ से निकल जायेंगी। उदाहरण के लिये, मध्य प्रदेश के मुख्य मंत्री मुझे बता रहे थे कि वे मेंगनीज तथा अन्य खनिज पदार्थ राज्य से निर्यात करते हैं। बिहार अभ्रक तथा ऐसी अन्य वस्तुओं का निर्यात करता है। वे विक्रय कर के रूप में केवल एक दो पैसा प्रति मन लगा देते हैं। इससे प्रांत के कोष में एक करोड़ के लगभग रुपया आ जाता है।

अब हम कह चुके हैं कि यदि ये वस्तुएं राज्य में उपभोगार्थ हों तभी यह कर लगाया जा सकता है, अन्यथा नहीं; और इसका परिणाम यह होगा कि प्रांतों के वित्तों में भयानक कमी पड़ जायेगी। अतएव मेरे विचार में 'for the purpose of consumption in that State' शब्द हटा दिये जाने चाहियें और उस कमी को पूरा करने के लिये मैं एक नये खंड का सुझाव दे रहा हूं जो मैंने अभी पढ़ा था और जिसमें लिखा है "The Union Parliament shall have power to amend the laws in respect of taxes on sale or purchase of goods with a view to bring uniformity in the laws made by the various States of the Union or in the interests of the Union as a whole" यह तर्क किया जा सकता है कि यदि यह शक्ति यहां नहीं रखी गई तो कई राज्य ऐसे कर लगायेंगे जो वास्तव में आबकारी कर या उत्पादन कर ही होगा। मैं तो केवल यही चाहता हूं कि जब ऐसे कर लगाये जायें जिनसे केन्द्र को या व्यापार को हानि पहुंचे, तब खंड (4) में प्रदत्त यह शक्ति प्रयुक्त होगी और मैं यह भी कहता हूं कि राष्ट्रपति को अंतिम शक्ति होगी, ताकि आवश्यकता पड़ने पर केन्द्र हस्तक्षेप कर सके।

इसके साथ ही मैं यह भी नहीं चाहता कि इस अनुच्छेद 264क से प्रांतों को ऐसा कुचल दिया जाये कि वे अपने राष्ट्रनिर्माण के कार्यों—जैसे शिक्षा आदि को भी न चला सकें। अतः मेरे इस संशोधन से, कि 'for the consumption in that State' इन शब्दों को हटा कर खंड 4 जोड़ दिया जाये, केन्द्र को किसी प्रकार की हानि नहीं होगी और राज्य को भी कुछ आय हो जायेगी। वास्तव में वित्तीय उपबंधों संबंधी हमारे वाद-विवाद के समय आसाम जैसे राज्यों ने हमें बताया था कि वे खनिज तेल, पेट्रोलियम आदि उत्पन्न करते हैं किन्तु उन्हें कुछ भी नहीं मिलता है। प्रधान मंत्रियों के सम्मेलन में भी यह बात तय हो गई थी कि वे एक पाई तक का विक्रय-कर लगा सकते हैं जिसे उन्हें अपना प्रशासन चलाने के लिये कुछ आय मिल जाये। यह तो न्यायपूर्ण ही है कि जा प्रांत कोई वस्तु उत्पन्न करता है उसे उसके राजस्व का कुछ तो भाग मिलना ही चाहिये। वास्तव में मेरे प्रांत में चीनी होती है जिस पर कर नहीं है, पर गन्ना कर से ही हमें एक करोड़ रुपया मिलता है।

मैं नहीं समझता कि ऐसे निर्बन्धनों से केन्द्र को कुछ मिलेगा। किन्तु उनसे प्रांतों के मुख्य राजस्व स्रोत को हानि होगी। वास्तव में कुछ प्रांतों में राजस्व बहुत अधिक हैं। अतएव मेरे विचार में यह अनुच्छेद बहुत महत्वपूर्ण है और इसमें समुचित संशोधन होना चाहिये, और मैं नहीं समझता कि प्रांतों के साथ ऐसा अन्याय होना चाहिये जैसा इस अनुच्छेद में होता है। यदि मेरे संशोधन को स्वीकार कर लिया जायेगा तो केन्द्र और प्रांतों को—दोनों को लाभ होगा, और 'for the purpose of consumption in that State इन शब्दों को हटा देने से आयात तथा निर्यात शुल्कों में से केन्द्र का कुछ नहीं जायेगा। मेरे विचार में किसी प्रांतीय सरकार का यह विचार नहीं है कि उस कृत्य को हथिया ले, और इसके अतिरिक्त खण्ड (4) से संघ संसद को विक्रय कर की राशियों पर सीमा लगाने का सामर्थ्य होगा और उससे आयात तथा निर्यात पर प्रभाव नहीं पड़ेगा और यदि थोड़ा-सा कर लगा दिया जायेगा तो प्रांतों को लाभ हो सकेगा और यह उनके लिये बहुत अच्छा रहेगा।

उन प्रांतों के प्रति भी यह अन्याय है, जो पेट्रोलियम अथवा चाय जैसे मुख्य वस्तुओं को पैदा करते हैं, कि उन्हें उनमें से कोई आय न दी जाये। अब यदि आसाम को एक दो पैसा प्रति मन का थोड़ा-सा विक्रय-कर लगाने की अनुमति दे दी जाये तो उसे अपने प्रांत के लिये बहुत धन मिल जायेगा। इसी प्रकार बंबई जैसे प्रांतों को वहां उत्पन्न वस्तुओं पर विक्रय कर से कुछ धन मिल जायेगा और यदि ये सब देश भर में एकसम हों तो प्रांतों को भी लाभ होगा और अंतर्राज्यिक व्यापार तथा आयात एवं निर्यात में कोई कठिनाई नहीं होगी। मेरे विचार में मेरे संशोधन बहुत न्यायपूर्ण हैं और इन मामलों के लिये उपबंध कराने की कुछ व्यवस्था होनी चाहिये।

***श्री महावीर त्यागी:** श्रीमान, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 18 के संशोधन संख्या 425 में, अनुच्छेद 264क के खंड (1) के पश्चात्, निम्न नया परन्तुक प्रविष्ट कर दिया जाये:—

'Provided that the Sale tax shall not exceed Rs. 3/2 percent of the sale price.'

[श्री महावीर त्यागी]

[किन्तु विक्रय कर विक्रय-मूल के 3/2 प्रतिशत से अनधिक होगा।]"

श्रीमान, इस संशोधन को पेश करते हुए मैं उन लोगों के नाम में जिनके प्रतिनिधि हम हैं, सदन की न्याय-भावना से अपील करता हूं। एक दृष्टिकोण से यह अनुच्छेद अत्यन्त महत्वपूर्ण है। मैं समझता हूं कि यह संविधान राज्य तथा जनता के बीच एक संविदा है। इस संविदा का मसौदा बनाने का कार्य जनता के प्रतिनिधियों की इच्छा पर छोड़ा गया है। अतएव हमें उन प्रशासकीय कठिनाइयों से विचलित नहीं होना चाहिये जो विविध प्रांतों में, माननीय मंत्री बतायें वरन् हमें सामान्य नागरिकों की कठिनाइयों का ध्यान रखना चाहिये। संविधान नागरिक तथा राज्य के बीच एक संविदा है इसकी मुख्य शर्तें ये हैं कि नागरिक अमुक-अमुक कर देगा जब भी उसे विधि द्वारा ऐसा करने के लिये कहा जायेगा। यह सबसे बड़ा दायित्व है जो नागरिक अपने ऊपर लेने के लिये तैयार हैं। एक ओर भारत के नागरिक हैं और दूसरी ओर संविदे के दूसरे पक्षक, राज्य की ओर से डॉ. अम्बेडकर हैं। वे राज्य का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं तथा राज्य के दृष्टिकोण को ही पेश कर रहे हैं। राज्य, इस संविधान द्वारा शांति बनाये रखने का तथा जनता की समृद्धि को बढ़ाने का उत्तरदायित्व लेता है। जनता अनुपस्थित है, मैं उन लोगों के प्रतिनिधियों की सद्भावना को अपील करता हूं कि वे अपने लोगों के प्रति जिनके वे प्रतिनिधि हैं, सच्चे रहें तथा राष्ट्र के इस उच्चतम न्यायालय में उनके हितों का रक्षण करें। हम उनकी अनुपस्थिति में ही इस सदन में उनके भाग का निर्णय कर रहे हैं।

जब हम प्रांतीय सरकारों को किसी नागरिक की जेब से एक पाई लेने की अनुमति दें तो हमें देखना चाहिये कि वह राजी से ली जाये और प्रत्येक पाई अंततः उसकी जेब में ही वापस लौट जाये चाहे उस व्यक्ति को उसके बदले में कोई सुविधाएं मिलें या अधिक राशि मिल जाये। आज भारत में सैकड़ों कर लिये जा रहे हैं और जनता को वास्तव में इन करों में से कोई विशेष लाभ नहीं होता, न उन्हें अधिक समृद्धि प्राप्त होती है जिसकी आशा सरकार से करने के लिये उन्हें कहा जाता है और न कोई और ही सुविधा प्राप्त होती है। राज्य यहां भारत में थोड़ी सी सेवा अवश्य करते हैं किन्तु उसका जनता पर अतिरिक्त भार पड़ता है। उदाहरणार्थ रेलें जनता की सुविधा के लिये हैं किन्तु उन्हें वाणिज्यिक आधार पर चलाया जाता है तथा जनता को उनके लिये पैसा देना पड़ता है। तार, डाकघर, नहरें आदि सब सुविधाएं कहलाती हैं पर उनके लिये हमें अतिरिक्त धन देना पड़ता है। राज्य जनता को कोई भी मुफ्त सुविधा नहीं देता—केवल कुछ कुनीन पानी मिला कर निर्धन लोगों में मुफ्त बांट दिया जाता है। अन्यथा डॉक्टर भी शुल्क लेते हैं और लोगों से पैसा लेकर इलाज करते हैं। अतः हम देखते हैं कि राज्य कोई सुविधा मुफ्त नहीं दे रहा, केवल हम अपने नागरिकों को यह विश्वास दिला कर मानसिक संतोष दे रहे हैं कि वे स्वतंत्र हैं। वे स्वतंत्रता के मूल्य को नहीं जानते। सरकार करों के बारे में सफाई देती है कि वह युद्ध में सीमान्त की रक्षा करता है। जब भी युद्ध होता है तब अतिरिक्त कर लगाये जाते हैं।

अब, मेरा निवेदन है कि हमें गैर-सरकारी व्यक्तियों से जो कर मिलते हैं वह उन्हें वापस नहीं लौटते। यदि प्रांतीय सरकारों को विक्रय-कर उगाहने की अनुमति दी जाये तो उन्हें यह भी देखना चाहिये कि वे वाणिज्य में समृद्धि बढ़ायें और उन लोगों में व्यापक वैभव बढ़ायें जो वाणिज्य में लगे हुए हैं। अब वे दुकानदारों को या उन लोगों को जो खरीदते या बेचते हैं या सुविधाएं प्रदान करते हैं? वे उन्हें कोई लाभ नहीं पहुंचाते। क्या उन्होंने कोई नई मंडियां बनाई हैं या कोई नई सुविधाएं प्रदान की हैं? यह कर किसलिये है? जब प्रांतीय विषयों की सूची में विभिन्न करों का उल्लेख किया गया था तब यह समझा गया था कि विक्रय कर प्रांतों के लिये छोटी सी सहायता है। क्योंकि उनका राजस्व बढ़ने की संभावना नहीं है। प्रांत अधिकत: अपने भू-राजस्व पर निर्भर हैं जो कई वर्षों के लिये लगभग पर निश्चित ही है। अत: प्रांतीय सरकारों के काम बढ़ने के साथ-साथ यह अच्छा समझा गया था कि उन्हें अपने आय-व्ययक का संतुलन करने के लिये कुछ अतिरिक्त राजस्व दिया जाये।

अब श्रीमान उन्हें विक्रय-कर के रूप में यह थोड़ा-सा सहारा दिया गया था। मैं देखता हूं कि वस्तुस्थिति ऐसी है कि कुछ वर्षों में ही परिस्थिति बिल्कुल बदल गई है। विक्रय-कर राजस्व का मुख्य स्रोत बनता जा रहा है, उनसे भी बड़ा बन गया है जो उनके राज्य के मुख्य स्रोत थे। मेरे प्रांत में युद्ध से पूर्व कुल राजस्व मुश्किल से 13 करोड़ के लगभग था। अब वह लगभग 55 करोड़ बन गया है। ये अन्य कर भी जो प्रांतों ने अपने राजस्व के मुख्य स्रोत के अतिरिक्त लगाये हैं जनता पर ही पड़े हैं।

अब श्रीमान भारत में करों का भार सबसे अधिक है। भारत में युद्ध काल में भी इतने कर नहीं लगाये गये जितने कि आज हैं। और सरकार इन करों के बदले में सबसे कम सुविधाएं दे रही है। यह सदन उच्चतम प्राधिकारी है जिसमें प्रभुता की सब शक्तियां निहित हैं। हम उच्चतम न्यायालय के रूप में यह निश्चित करने के लिये बैठे हैं कि क्या हम प्रांतीय सरकारों को छूट दे सकते हैं कि वे जनता पर कर लगाये जायें तथा कोई उच्चतम सीमा उस पर न लगे। क्योंकि विक्रय कर पर कोई सीमा नहीं है इसलिये वे कर को बढ़ाये जा सकते हैं और अंततोगत्वा ऐसा वक्त आयेगा जब जनता अधिक कुछ देने में समर्थ नहीं रहेगी और इसका विपरीत प्रभाव हमारे केन्द्र के करों पर भी पड़ेगा। यदि प्रांतीय सरकारें अपने करों को वर्तमान गति से बढ़ाती गईं तो जनता की समस्त करदान की समर्थता का शोषण प्रांतीय सरकार द्वारा ही हो जायेगा तथा इससे केन्द्रीय सरकार को हानि पहुंचेगी। मेरा कहना यह है कि यदि हम सीमा निश्चित नहीं करेंगे तो प्रांतीय सरकारें कर बढ़ाये जायेंगी और यह उन लोगों के साथ घोर अन्याय होगा जो हमारी दया पर निर्भर हैं। और जिन्हें विरोध करने का या कर देने से इनकार करने का अधिकार भी नहीं होगा। उन्हें केवल इसी बात पर संतोष करना होगा कि आखिर उन पर वे ही लोग कर लगा रहे हैं जिनके लिये उन्होंने मत दिये थे। यह 'मत पेटिका लोकतंत्र' है जिसका लोगों पर यह प्रभाव पड़ेगा। अत: मेरा निवेदन है कि श्रीमान, दो पैसे रुपये की दर नियत कर देनी चाहिये, जो 3/2 प्रतिशत बैठता है, ताकि प्रांत इस कर की दर को न बढ़ा सकें।

[श्री महावीर त्यागी]

फिर मैं एक और दृष्टिकोण से भी सीमा नियत करना चाहता हूं। मेरा यह कहना है कि चाहे विविध प्रांतों के आय-व्ययक बहुत बढ़ गये हैं, फिर भी वे जनता को पुरानी सरकारों से अधिक सुविधाएं नहीं दे रहे हैं। परिणाम यह है कि यद्यपि वे अपने आय-व्ययकों को अवाध रूपेण बढ़ा रहे हैं क्योंकि उन्हें कर उगाहने की स्वतंत्रता है, फिर भी वे अपना व्यय घटाने के लिये कुछ नहीं कर रहे हैं; किसी प्रांत में व्यय घटाने की प्रवृत्ति है ही नहीं। आज व्यय इतने हैं जितने युद्धकाल में भी नहीं थे। मैं कहता हूं कि युद्ध एक आपात था और उन्हें अस्थायी रूप में कर लगाने पड़ते थे। श्रीमान, उस समय विदेशी शासन था। किन्तु आज जनता की सरकार है। यद्यपि युद्ध समाप्त हो गया है फिर भी प्रांतीय सरकारों ने अपना व्यय कम करना आरंभ नहीं किया है। उनकी अधिकांश आय खर्च-खाते में चली जाती है और उसका कोई भी अंश पूंजीखाते में खर्च नहीं होता जिसका उद्देश्य लोगों को समृद्ध बनाना होता है। यदि इस धन को पूंजीखाते में खर्च किया जाता तो मैं इसकी सराहना कर सकता था। खर्च खाते में से बहुत कम धन पूंजी खातों में जा रहा है। पूंजीखाते में जब भी कोई धन व्यय करना होता है तब उसे ऋण द्वारा प्राप्त किया जाता है।

इस प्रकार, श्रीमान, वे प्रांतों के साधनों को ही नहीं घटा रहे हैं, वरन् नागरिकों पर भी भार डाल रहे हैं। इसलिये मैं निवेदन करता हूं कि यदि इस प्रकार प्रांतों को आजादी दे दी जायेगी कि वे प्रांत के नागरिकों पर भार बढ़ाये जायें तो इसका प्रभाव समस्त देश की समृद्धि पर पड़ेगा। अतः जब हम नागरिकों तथा राज्यों के बीच विनिश्चय कर रहे हैं तब हमें वे सीमायें भी नियत कर देनी चाहियें जहां तक प्रांत जा सकते हैं। अतः मैं, दलीय पक्षपातों को त्याग कर, प्रांतीय सरकारों से अनुरोध करता हूं कि हमें, राष्ट्र के न्यायाधीशों के रूप में बैठे हुए नागरिकों के प्रति जो यहां उपस्थित नहीं हैं, न्याय करना चाहिये—पक्षपात हीन न्याय, पूर्ण न्याय, ठीक-ठीक तथा संतुलित न्याय करना चाहिये। उन्हें पूरा न्याय मिलना चाहिये।

आजकल की विक्रय-कर प्रणाली में कई त्रुटियां हैं। अब, दिल्ली में विक्रय कर नहीं है; संयुक्त प्रांत में मोटर गाड़ियों, रेडियो, बाइसिकलों आदि पर विक्रय कर है। जब भी मेरठ में किसी नागरिक को मोटर गाड़ी या बाइसिकल की अपेक्षा होती है वह वहां स्थानीय दुकान पर नहीं जाता। स्थानीय अधिकरण को हानि होती है। वह दिल्ली आ जाता है। मैं देखता हूं कि डॉ. अम्बेडकर मुझे चुप होने के लिये कह रहे हैं। वे अनुचित प्रभाव डाल रहे हैं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैंने यह बात समझ ली है।

***श्री महावीर त्यागीः** क्या आप समझ गये? क्या आप इसकी सराहना भी करते हैं? क्या आप मेरी बात मानने के लिये तैयार हैं?

आपके पीछे जनता के प्रतिनिधि हैं। डॉ. अम्बेडकर मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि यदि आप न्यायी हैं, यदि आप न्याय को मान्यता देते हैं, तो आप अपने जीवन में आगे चल कर भारत के उच्चतम न्यायाधीश बन सकते हैं, यदि आप

नागरिक के प्रति न्याय करें। मेरा निवेदन है, श्रीमान, यही तरीका है जिससे कि कर लगाया जा रहा है। एक राज्य में दो आना रुपया कर है और दूसरे राज्य में दो पैसा रुपया कर है। एक राज्य में एक ही स्थान पर कर लगाया जाता है, दूसरे राज्य में कई स्थानों पर बिक्री के समय कर लगाता है। जुआधार के समान जो भी कुछ रकम देता है उसका कुछ अंश जुए के कोष में चला जाता है। इस प्रकार प्रांत प्रत्येक बिक्री के पीछे पड़े हुए हैं। यह तो अंधा कानून बनता जा रहा है।

मेरा निवेदन है कि यह बहुत गम्भीर मामला है। अच्छा हो यदि डॉ. अम्बेडकर समस्त अनुच्छेद पर पुनर्विचार करें तथा इसे 'एक रूप कर' बना दें तथा केन्द्रीय सरकार के हाथ में दे दें। केन्द्रीय सरकार के लिये सबसे अच्छी बात यह होती कि वे एक विधि बना देते। जिससे कि प्रांतों में करारोपण में एकरूपता आ जाती और कर एक ही स्थान पर वसूल होता और एक ही वस्तु के विषय में वसूल होता। इन शब्दों के साथ, श्रीमान, मैं आशा करता हूं कि सदन, उन आदेशों की परवाह न करते हुए जो उन्हें मिले हों, कृपया न्याय करेगा और इस मामले में स्वतंत्रतापूर्वक बोलेगा तथा मत देगा और नागरिकों के अधिकारों का रक्षण करेगा।

***अध्यक्षः** कुछ ऐसे संशोधन हैं जो इस अनुच्छेद की मूल प्रस्थापना के विषय में हैं। मुझे पता नहीं है कि वे सब संशोधन अब ठीक बैठते हैं या नहीं किन्तु एक तो ऐसा है ही जो पेश हो सकता है। संशोधन सं. 385, श्री अजित प्रसाद जैन।

***श्री अमिय कुमार घोष** (बिहार : जनरल): मेरे नाम से संशोधन सं. 383 है।

***अध्यक्षः** मैं पहले संशोधन सं. 385 को लेता हूं।

(संशोधन सं. 385 को पेश नहीं किया गया।)

***अध्यक्षः** क्या आप संशोधन सं. 383 को पेश करना चाहते हैं।

***श्री अमिय कुमार घोषः** हां श्रीमान।

***अध्यक्षः** जरा बताइये कि अब यह इसमें कैसे ठीक बैठता है।

***श्री अमिय कुमार घोषः** अध्यक्ष महोदय, हां, मेरा संशोधन सं. 383 पहले संशोधन सं. 307 पर था, अर्थात् अनुच्छेद 264-क के मूल मसौदे पर था, किंतु अब उस संशोधन पर दूसरा एक संशोधन पेश कर दिया गया है जिससे पहले की स्थिति में जरा भी अन्तर नहीं पड़ता, केवल इतनी सी बात है कि कुछ छोटी छोटी बातों को स्पष्ट करने के लिये पुराने अनुच्छेद में एक व्याख्या जोड़ दी गई हैं। अतः मेरा संशोधन उस संशोधन में भी ठीक बैठता है जो अभी डॉ. अम्बेडकर ने पेश किया है। अतएव मैं अपना संशोधन पेश करता हूं:

"कि सूची 13 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 307 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 264क का खंड (2) हटा दिया जाये।"

[श्री अमिय कुमार घोष]

इस संशोधन का उद्देश्य यह है कि खंड (2) को हटा दिया जाये जो अन्तर्राज्यिक व्यापार तथा वाणिज्य के विषय में है तथा ऐसे वाणिज्य को विक्रय कर से मुक्त करता है। वास्तव में मेरा स्पष्ट विचार यही है कि यह संविधान चाहे किसी रूप में संथानीय हो किंतु असल में यह एकात्मक संविधान ही है। इस संविधान में सब शक्तियों तथा वित्त-साधनों को केन्द्र ने ले लिया है और प्रांतों के पास अपने साधन नहीं रहे हैं। वास्तव में संघ पर इतना बोझ डाल दिया है कि वह शायद अपने बोझ से ही टूट जाये। यह कहा जाता है कि हमें प्रांतीय स्वायत्तता प्राप्त है, किन्तु मैं बलपूर्वक कहता हूं कि इस संविधान के अन्तर्गत हमें जो प्रांतीय स्वायत्तता प्राप्त होगी वह 1935 के अधिनियम वाली से भी बुरी होगी। अब मैं इस प्रश्न पर आता हूं कि इस संविधान में प्रांतों को केवल एक ही कर-साधन प्राप्त है और वह है—विक्रय कर। किन्तु इस शक्ति को भी इस नये अनुच्छेद 264क द्वारा बहुत हद तक छीन लिया गया है।

अब मैं विशेषत: बिहार प्रांत के निर्देश से बोलूंगा, क्योंकि मुझे अन्य प्रांतों की विक्रय-कर स्थिति का ज्ञान नहीं है। जहां तक बिहार का संबंध है, मुझे बलपूर्वक कहना होगा कि यदि यह नया अनुच्छेद 264क रहेगा तो इस प्रांत को तत्काल 2 करोड़ रुपये की आय की हानि होगी। बिहार की प्रति व्यक्ति आय और उसके फलस्वरूप प्रति व्यक्ति व्यय भी समस्त भारत में न्यूनतम है, कारण यह है कि अब तक उसके वित्तीय साधन अपरिवर्तनशील थे। उसकी भू-राजस्व की आय भी निश्चित है। संयुक्त प्रांत, मद्रास तथा बम्बई जैसे अन्य प्रांतों में भू-राजस्व बढ़ता रहता है, किन्तु बिहार में स्थायी कर व्यवस्था के कारण भूमि से आय सदा एक-सी रहती है, वह लगभग दो करोड़ से कुछ कम है।

फिर आय का एक दूसरा स्रोत है—आबकारी, किन्तु यदि मद्य-निषेध होगा तो प्रांत के वर्तमान राजस्व में से साढ़े पांच करोड़ की हानि हो जायेगी और इस हानि को पूरा करने का एकमात्र वित्तीय साधन यह विक्रय कर ही रह जाता है। यह विक्रय कर ही एकमात्र लचकदार कर था जो राज्यों के पास शेष था जिससे वे अपने राजस्व को बढ़ा सकते थे, किन्तु वह भी उनसे छीना जा रहा है। बिहार के पास महान साधन हैं किन्तु उनके होते हुए भी वह भारत के निर्धनतम प्रांतों में से है। आज भारत में प्रयुक्त होने वाले कोयले तथा लोहे का तीन-चौथाई बिहार से आता है। इनके अतिरिक्त चीनी, सीमेंट, मिर्च, तम्बाकू आदि अन्य वस्तुऐं भी बिहार से बाहर जाती हैं; किन्तु यदि यह उपबन्ध रहेगा तो परिणाम यह होगा कि बिहार को इन चीजों पर कोई कर लगाने का अधिकार नहीं होगा तथा वह अपने धन से भी कोई लाभ नहीं उठा सकेगा। इस अनुच्छेद से सदा के लिये आय बढ़ाने का द्वार भी बन्द हो जाता है।

अतएव यही न्याय है कि बिहार को, जो प्रांत के श्रम द्वारा लोहा, कोयला आदि पैदा करता है तथा उन औद्योगिक क्षेत्रों में विधि व्यवस्था बनाये रखने के लिये बहुत धन व्यय करता है, उन में से कुछ आय भी मिलनी चाहिये। यह बात तो समझ में आ सकती है कि कोई ऐसा खंड रख दिया जाये कि उन सब वस्तुओं पर जो किसी प्रांत से बाहर जायें एक समान दर से कर लगेगा तथा उस कर में से एक अंश तो उस प्रांत को मिलेगा जो उसे पैदा करता है तथा शेष उस प्रांत को मिलेगा जहां वह वस्तु खर्च होती है। वर्तमान अनुच्छेद 264क के

अधीन लोहा, कोयला तथा अन्य वस्तुऐं बिहार से बाहर जायेंगी, पर प्रांत को उन पर कर लगाने का अधिकार नहीं होगा। यह स्थिति प्रांत के प्रति अन्यायपूर्ण है। इसका प्रभाव प्रांत के वित्तीय साधनों पर बहुत बुरा पड़ेगा।

राज्य-सरकारें प्रधानत: जनता के प्रति उत्तरदायी हैं और वे कई सामाजिक कल्याण के कार्यों को करने के किये नैतिक रूप में बाध्य हैं। उन्हें विधि-व्यवस्था बनाये रखनी पड़ती है जिस पर महान व्यय होता है। उन्हें कमी, अशिक्षा, रोग तथा बेकारी को दूर करना होता है। इन कर्तव्यों को कैसे पूरा किया जाये? इन सब कार्यों के लिये धन खर्च करना पड़ता है। किन्तु आय नहीं होगी तो खर्च कहां से किया जायेगा?

अत: मैं इस अनुच्छेद 264क का विरोध करता हूं और मेरा निवेदन है कि जहां तक अंतर्राज्यिक व्यापार का संबंध है, विशेषत: बिहार का, मैं मसौदा समिति से प्रार्थना करता हूं कि वे इस विषय पर पुन:विचार करें। प्रतिदिन प्रांतों पर नये उत्तरदायित्व लादे जा रहे हैं और वे उन्हें पूरा करेंगे तो बहुत धन चाहिये, अधिक धन चाहिये। देश में स्थिति ऐसी है कि पुलिस तथा अन्य प्रशासकीय मामलों पर खर्च बढ़ते जाते हैं। वे कहां से पूरे हो सकते हैं जब तक कि हमारे अपने वित्तीय साधन न हों?

अत:, मैं इस अनुच्छेद 264क का विरोध करता हूं तथा निवेदन करता हूं कि जहां तक अन्तर्राज्यिक व्यापार तथा वाणिज्य का संबंध है, उन्हें विक्रय कर से मुक्त नहीं करना चाहिये तथा प्रांतों को ऐसे महत्वपूर्ण आय-साधन से वंचित नहीं करना चाहिये। इस अनुच्छेद से केवल बड़े व्यापारी को ही लाभ होगा जो सदा करों को देने से बचता रहता है, किन्तु छोटे व्यापारियों को तथा उपभोक्ताओं को कोई लाभ नहीं होगा। यदि विक्रय कर लगाने की शक्ति को इस प्रकार समाप्त करना है तो यही अच्छा है कि राज्यों को सर्वथा समाप्त ही कर दिया जाये। यदि आप राज्यों को बनाये रखना चाहते हैं तो आपको उन्हें अनाथ के समान नहीं बना देना चाहिये जो सदा झोली फैला कर संघ सरकार के सामने धन तथा सहायता की याचना करते रहें। उन्हें अपने पैरों पर खड़े होने की शक्ति देनी चाहिये और कुछ साधन देने चाहिये जिनसे वे अपनी विभिन्न योजनाओं को क्रियान्वित कर सकें। स्वस्थ्य राज्य से ही शक्तिशाली संघ बनता है।

फिर, श्रीमान, इस नये अनुच्छेद में लिखा है:—

"No law of a State shall impose, or authorise the imposition of, a tax on the sale or purchase of goods where such sale or purchase takes place—

* * *

(b) in the course of the import of the goods into, or export of the goods out of, the territory of India.

[राज्य की कोई विधि, वस्तुओं के क्रय और विक्रय पर, जहां ऐसा क्रय या विक्रय–

* * *

(ख) भारत राज्य-क्षेत्र में वस्तुओं के आयात अथवा उसके बाहर निर्यात के दौरान में, होता है वहां कोई करारोपण न करेगी और न करना प्राधिकृत करेगी।]"

[श्री अमिय कुमार घोष]

अब इससे व्यापारी को बचने की काफी गुंजाइश हो जाती है। निर्यात के समस्त मामलों में वस्तु के देश से निर्यात होने तक कई क्रय विक्रय हो जाते हैं। किन्तु इस खंड के अन्तर्गत ये सब क्रय विक्रय—वे मध्यवर्ती क्रय-विक्रय भी—विक्रय कर से मुक्त होंगे। यह बात समझ में आ सकती थी यदि निर्यात के समय ही, अर्थात् निर्यात के पहले अंतिम क्रय-विक्रय पर ही विक्रय-कर नहीं लगाया जायेगा। किन्तु वर्तमान रूप में इस खंड का तो यह अर्थ है कि सामान के भारत के राज्य क्षेत्र से बाहर भेजने के दौरान में जितने भी क्रय-विक्रय होंगे वे सब विक्रय-कर से मुक्त होंगे। अब आप इन क्रय-विक्रयों के विषय में कैसे जान सकते हैं कि वे किस प्रकार के हैं। 'क' किसी वस्तु को यह कहकर खरीदता है कि वह उसका निर्यात करेगा। किन्तु वह उसका निर्यात करने की बजाय 'ख' को बेच देता है तथा 'ख' भी उसे निर्यात करने का प्रयोजन बताकर ही खरीदता है, और इस प्रकार वह वस्तु एक हाथ में दूसरे हाथ में जाती है, एक प्रांत से दूसरे प्रांत में जाती है पर उस पर कर नहीं लगता और शायद अंत में वह वस्तु निर्यात होती ही नहीं है। आप इस क्रिया को कैसे रोक सकते हैं? यदि इस खंड को इसी रूप में पारित कर दिया जायेगा तो बहुत कठिनाई होगी तथा गड़बड़ होगी। अतः मेरा नम्र निवेदन है कि यहां निर्यात तथा आयात की स्पष्ट परिभाषा कर देनी चाहिये, और हमें कहना चाहिये कि निर्यात का अर्थ है 'अन्तिम क्रय-विक्रय' और आयात का अर्थ है 'प्रथम क्रय-विक्रय', और केवल इन्हीं क्रय-विक्रयों में वस्तु को विक्रय-कर से मुक्त किया जायेगा, अन्य स्थितियों में नहीं।

इन शब्दों के साथ, श्रीमान, मैं अपने संशोधन को सभा में स्वीकृति के लिये पेश करता हूं।

***अध्यक्षः** डॉ. कुंजरू, क्या आप इस अनुच्छेद पर संशोधन पेश करना चाहते हैं?

***पं. हृदय नाथ कुंजरू** (संयुक्त प्रांत : जनरल): हां, श्रीमान, किंतु मेरा संशोधन टाइप हो रहा है और आशा है वह शीघ्र ही तैयार हो जायेगा। आशा है आप मुझे कुछ समय देंगे, जिससे.....

***अध्यक्षः** आप उसे बाद में पेश कर सकते हैं और इस बीच में हम कुछ चर्चा चला सकते हैं।

श्री जगत नारायण लाल।

***श्री जगत नारायण लाल** (बिहार : जनरल): श्रीमान, मैंने कोई संशोधन नहीं भेजा है, और न मेरा विचार किसी संशोधन के समर्थन में, जो पेश हो चुका हो, जोर देने का है। किंतु साथ ही मैं इस अनुच्छेद 264क के प्रस्तावक को एक सुझाव देना चाहता हूं कि वे कुछ बातों पर विचार करें जिन्हें सदन में काफी बड़ा वर्ग प्रबल रूप में अनुभव कर रहा है तथा जिनके कारण यहां पहले ही बताये जा चुके हैं।

इस प्रश्न पर कोई मतभेद नहीं है कि राज्यों को आयात या निर्यात पर कर न लगाने दिया जाये। किंतु जैसा कि कुछ सदस्य पहले कह चुके हैं, और मुझे उसी बात को दोहराना पड़ेगा कि जब तक कि 'in the course of' इन शब्दों को

स्पष्ट नहीं किया जायेगा जो खंड (1) के उप-खंड (ख) में है तब तक इन शब्दों से अवश्य काफी गड़बड़ी होगी। यह बताया गया है कि अमरीका के उच्चतम न्यायालय ने इस प्रश्न पर कुछ विनिश्चय किये हैं जिससे स्थिति स्पष्ट हो गई है। कई कारणों से हम चाहते हैं कि ये शब्द हटा दिये जायें। मेरा सुझाव है कि उनके स्थान पर 'at the initial stage of import into' तथा 'at the ultimate stage of export out of India' ये शब्द रख दिये जायें। मेरा सुझाव है इन शब्दों को रखा जाये, पहला कारण यह है कि इससे गड़बड़ दूर हो जायेगी, दूसरा कारण यह है कि वे कठिनाइयां दूर हो जायेंगी जो किसी वस्तु के एक हाथ से दूसरे हाथ में जाने से तथा अंततः उसका एक अंश निर्यात होने से पैदा हो जाती हैं। अन्यथा बहुत ज्यादा बड़बड़ी होगी और बहुत कठिनाई होगी।

पहले के कुछ वक्ताओं ने पहले ही बता दिया है कि यदि उप-खंड (1) में 'for the purpose of consumption in that State' इन शब्दों को रहने दिया जायेगा तो बिहार तथा मध्य-प्रदेश जैसे प्रांतों को क्या-क्या कठिनाइयां होंगी, और मैं इन युक्तियों को दोहराना नहीं चाहता। किंतु मैं यह बात अवश्य बताना चाहता हूं कि हमें कुछ महत्वपूर्ण राजस्व-साधनों की आवश्यकता है जिससे कि हम उन कार्यों को पूरा कर सकें जो कांग्रेस ने हमें सौंपे हैं—जैसे मद्य-निषेध आदि हैं—और विक्रय कर अत्यन्त महत्वपूर्ण राजस्व साधन है जो बढ़ता रहता है। केन्द्र को कोई हानि भी नहीं होती और उस पर कोई प्रभाव भी नहीं पड़ता, फिर यह कहना व्यर्थ है कि जिन प्रान्तों में लोहा, चीनी, कोयला, सीमेंट आदि बड़ी-बड़ी चीजें बनती हैं तथा बड़े पैमाने पर उत्पादन होता है, वे प्रांत उनके विक्रय पर प्रांत में या बाहर कर न लगायें। अतः मैं चाहता हूं कि 'for the purpose of consumption in that State' ये शब्द हटा दिये जायें। अन्यथा उप-खंड (2) का परन्तुक हटा दिया जाना चाहिये जिसमें लिखा है कि वे कर एक वर्ष तक लगाये जा सकते हैं, और वे कर पहले के समान लगते रहने चाहियें।

मैं इस अनुच्छेद के प्रस्तावक को ये ही थोड़े से सुझाव देना चाहता हूं। मैं इस पर संशोधन के रूप में जोर नहीं देना चाहता, वरन! मैं इसे प्रस्तावक की सद्भावना पर छोड़ देता हूं। केन्द्र को हानि पहुंचाने की किसी की इच्छा नहीं है, फेडरल सरकार को भी करों से या कर लगाने की शक्ति से वंचित करके हानि पहुंचाने की कोई इच्छा नहीं है, और फेडरल सरकार को भी ऐसी इच्छा नहीं होनी चाहिये कि राज्यों को हानि पहुंचाई जाये—मुझे आशा है कि ऐसी इच्छा नहीं है। दोनों को मिलजुल कर काम करना चाहिये। दोनों का परस्पर संबंध है, क्योंकि फेडरल सरकार तथा राज्यों की सुरक्षितता तथा भलाई पर समूचे देश की सुरक्षितता तथा भलाई निर्भर है। अतः, श्रीमान, मैं इन अनुच्छेद के प्रस्तावक से अपील करता हूं कि वे इन दो सुझावों पर विचार करें तथा ऐसे परिवर्तन या रूप भेद कर दें जो समस्त सदन को स्वीकार्य हों तथा कोई ऐसी क्षोभ की भावना न हो और ऐसी भावना न हो कि राज्यों की कठिनाइयों पर पूरा ध्यान नहीं दिया गया है। जो कुछ कहा जा चुका है उसके अतिरिक्त मैं कुछ और नहीं कहना चाहता।

पंडित हृदय नाथ कुंजरू: अध्यक्ष महोदय, महोदय, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 264क के खंड (1) के पश्चात्, निम्न नये खंड प्रविष्ट कर दिये जायें:

'(1a) No law of a State shall impose or authorise the imposition of a tax on the sale or purchase of goods within a State except where such sale or purchase is made to or by a consumer.

(1b) Parliament may, by law, fix the maximum rate at which a sale tax may be levied by a State on the sale or purchase of goods.'

[(1क) राज्य की कोई विधि राज्य के भीतर ही वस्तुओं के क्रय या विक्रय पर करारोपण न करेगी और न करना प्राधिकृत करेगी, सिवाय उस स्थिति के जब कि वह क्रय या विक्रय किसी उपभोक्ता द्वारा किया जाये।

(1ख) संसद, विधि द्वारा, अधिकतम दर निश्चित कर सकती है जिससे कोई राज्य वस्तुओं के क्रय या विक्रय पर विक्रय कर लगा सकता है।]"

श्रीमान, डॉ. अम्बेडकर ने सदन के समक्ष जो संशोधन रखा है उससे राज्य को आयात तथा निर्यात पर कर लगाने का वर्जन है। इस प्रकार वह केन्द्रीय सरकार के हितों की रक्षा करता है। संशोधन से राज्य को यह भी वर्जन हो जाता है कि वह अंतर्राज्यिक व्यापार के दौरान में खरीदे गये या बेचे गये माल पर विक्रय कर नहीं लगा सकता। इस प्रकार वह उस राज्य के हितों की रक्षा करता है जिसमें अंततोगत्वा वे वस्तुएं बिकेंगी। किंतु वह उपभोक्ताओं के हितों का रक्षण बहुत सीमित रूप में ही करता है। डॉ. अम्बेडकर द्वारा पेश किये हुए संशोधन के खंड 3 में कहा गया है कि कोई विधान-मंडल ऐसी वस्तुओं के, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा समुदाय के जीवन के लिये आवश्यक घोषित की गई है, क्रय या विक्रय पर कोई कर नहीं लगायेगा, जब तक कि कर लगाने वाली विधि राष्ट्रपति के विचार के लिये रक्षित किये जाने पर उसे उसकी अनुमति प्राप्त न हो गई हो।

यह संशोधन उपभोक्ताओं के हितों की भी रक्षा करता है, किंतु केवल उन वस्तुओं के विषय में जिन्हें केन्द्रीय सरकार समुदाय के जीवन के लिये आवश्यक घोषित कर दे। यह तो केन्द्रीय सरकार पर ही निर्भर होगा कि वह उस श्रेणी में समय-समय पर किन वस्तुओं को शामिल करेगी। अतएव यह अभीष्ट है कि उपभोक्ता के हितों की रक्षा के लिये कुछ और किया जाये।

कई प्रांतों में, श्रीमान, विक्रय कर तभी लगाया जाता है जब कि वस्तुएँ उपभोक्ता के पास पहुंचती हैं। किंतु सब प्रातों में यह बात नहीं है, और कर की दर पर सीमा भी नहीं है। मेरे विचार में जन साधारण के हित में यह अभीष्ट है कि संविधान में इन बातों का ध्यान रखा जाये।

मेरे संशोधन के प्रथम भाग में यह लिखा है कि वस्तुओं के क्रय या विक्रय पर कर केवल तभी लगाया जाये जब कि क्रय या विक्रय किसी उपभोक्ता द्वारा किया जाये। मेरे संशोधन के दूसरे भाग में संसद को प्राधिकार दिया गया है कि वह कर लगाने की अधिकतम दर निश्चित कर सकती है। यह कहा जा सकता है कि जनता की सामान्य आर्थिक स्थिति से किसी राज्य की सरकार की विक्रय कर लगाने की शक्ति पर सीमा लग जायेगी। सर्वप्रथम तो यह निर्धारण करना बहुत कठिन है कि उपयुक्त दर क्या होनी चाहिये। दूसरी बात यह है कि यदि दर को अनुभव से ही निर्धारित करना है तो परीक्षण तथा त्रुटियां करनी होंगी, किसी वस्तु विशेष के कर की आय अधिक हो सकती है, किंतु दूसरी ओर, किसी अन्य वस्तु की बिक्री शायद गिर जाये। अतएव यह मामला किसी राज्य के वित्त-मंत्री के निर्णय पर ही नहीं छोड़ा जा सकता। यह इतना महत्वपूर्ण है कि इसे इसी समय निबटाना होगा।

कुछ देशों में बहु-मुखी विक्रय कर है। शायद इन देशों की आर्थिक स्थिति ऐसी है कि यहां ऐसे कर लगाये जा सकते हैं। किन्तु, भारत में, विशेषत: इस समय जब कि मूल्य बहुत चढ़े हुए हैं, यह स्पष्टत: अवांछित है कि उपभोक्ता के पास पहुंचने से पहले वस्तुओं के निर्माण में प्रत्येक पग पर क्रय या विक्रय पर कर लगे। मेरे विचार में इस पर सब सामान्यत: सहमत होंगे कि यह अभीष्ट है कि इस संबंध में राज्य की शक्ति पर कुछ निर्बंधन लगने चाहियें। और जहां ऐसा निर्बंधन लगाया भी गया है वहां यह वांछनीय है कि संसद को कर की अधिकतम सीमा निश्चित करने की शक्ति होनी चाहिये।

कई वक्ताओं ने शिकायत की है कि आजकल के विक्रय कर बहुत भारी हैं। इससे पता लगता है कि संबद्ध सरकार ऐसी दरों को निश्चित नहीं कर सकी है। जिनसे उपभोक्ताओं में संतुष्टता की भावना पैदा हो। अतएव कुछ और कार्यवाही करना आवश्यक है। इस संबंध में इतना ही करना काफी है कि संसद को यह शक्ति दे दी जाये कि वह, जहां आवश्यक हो, उच्चतम सीमा निर्धारित कर दे। वह विलासिता की वस्तुओं के विषय में चाहे वैसा न करे किन्तु ऐसी वस्तुओं के विषय में वह सीमा नियत कर सकती है जो, चाहे हमारी प्रधान आवश्यकताओं के लिये सर्वथा अपेक्षित न हों, फिर भी जिनकी ऐसी व्यापक मांग है कि जनता के लिये उनके बिना काम चलाना कठिन होगा।

श्रीमान, मेरे विचार में मैंने जो कुछ कहा है उससे मेरे संशोधन का प्रयोजन काफी स्पष्ट हो जाता है और यह सिद्ध हो जाता है कि संशोधन ऐसा है कि सदन उसका अनुमोदन कर सकता है। जैसा कि मैं पहले ही कह चुका हूं, डॉ. अम्बेडकर ने सदन के समक्ष जो संशोधन रखा है उसमें केन्द्रीय सरकार के हितों का तथा उन राज्यों के हितों का, जिनमें अन्य राज्यों से लाकर सामान बेचा जाएगा, पूरा रक्षण किया गया है। किन्तु उसमें उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा अंशत: ही की गई है। मेरे संशोधन द्वारा उपभोक्ता की भी उतनी ही पूरी रक्षा की जानी है जितनी डॉ. अम्बेडकर के संशोधन में केन्द्रीय सरकार के हितों की तथा उस राज्य के हितों की, जिसमें वे वस्तुएं अंतत: बेची जायें, रक्षा की गई है।

***श्री बी.एम. गुप्ते** (बम्बई : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मुझे खेद है कि मुझे खंड (2) के वर्तमान रूप पर अपना असंतोष अभिव्यक्त करना है। मेरी शिकायत यह है कि इसमें प्रांतीय सरकारों की कठिनाइयों का समुचित ध्यान नहीं रखा गया है। हमारा राज्य सर्वकल्याणकारी राज्य है और ज्यों-ज्यों समय गुजरेगा वह अधिकाधिक वैसा बनता जायेगा, किन्तु अधिकांश कल्याण कार्य प्रांतों और स्थानीय निकायों के भाग में आता है। हम प्रशासन के एककों की सीढ़ी पर ज्यों-ज्यों नीचे उतरते हैं, वे जनता की आवश्यकताओं से अधिक सन्निकट दिखाई देते हैं, और आज भी प्रांतीय सरकारों को राष्ट्र-निर्माण के कार्यों को पूरा करने में बहुत कठिनाई पड़ती है। और कई प्रांतों में राज्यों में राज्यों के विलय के कारण उनकी कठिनाइयां बढ़ गई हैं।

उदाहरण के लिये, मेरे प्रांत बंबई का मामला लीजिये, आज बंबई में आगामी कुछ वर्षों के आय-व्ययकों में भारी घाटे की संभावना दिखाई दे रही है, और ऐसे समय उन्हें कुछ राजस्व-साधन प्रदान करने की बजाय हम उन साधनों पर भी निर्बंधन लगा रहे हैं जो उन्हें इस समय उपलब्ध हैं। अब, विक्रय कर सबसे अधिक महत्वपूर्ण और शायद सबसे अधिक लचकदार राजस्व साधन है और यदि हम उस साधन की आय को कम कर देंगे तो वे अपने घाटे को कैसे पूरा करेंगे? प्रांतीय सरकारों ने यह प्रस्थापना रखी थी कि प्रांतों तथा केन्द्र को एक मेज के चारों ओर समवेत् होकर समस्त स्थिति का सिंहावलोकन करना चाहिये और देश के वित्तीय साधनों के अधिक न्यायपूर्ण वितरण के लिये कोई व्यवस्था बना लेनी चाहिये, और यदि अधिक कुछ न हो, तो वित्तीय कठिनाइयों में से सबको न्यायपूर्ण अंश बंटाना चाहिये।

श्रीमान, आपने जो विशेषज्ञ वित्त-समिति नियुक्त की थी, उसका प्रतिवेदन उस प्रयोजन के लिये प्रशंसनीय अवसर था, किन्तु मस्विदा समिति ने उस प्रतिवेदन पर विचार नहीं होने दिया, पूर्व स्थिति को बनाये रखा तथा संविधान के आरम्भ से दो वर्ष में एक वित्त-आयोग नियुक्त करने का उपबन्ध कर दिया। वह सकारण हो सकता है। मैं उसे चुनौती नहीं देता, किन्तु मेरा कहना यह है कि वे ही कारण इन निर्बंधनों के आरोपण पर भी उसी प्रकार लागू होने चाहियें। यदि वित्तीय आयोग का काम बाद में हो सकता है, तो इन निर्बंधनों का आरोपण भी निस्संदेह बाद में हो सकता था। आखिर, प्रश्न यह नहीं है कि ये निर्बंधन उचित हैं या नहीं—वे उचित हो सकते हैं—किन्तु प्रश्न यह है कि क्या प्रांतों को प्रतिकर के रूप में अन्य साधन उपलब्ध कराये बिना इन निर्बंधनों को लगाना हमारे लिये औचित्यपूर्ण है। इन राजस्व-साधनों की अनुपस्थिति में प्रांत क्या करेंगे? वे सदा अनुदानों के लिये केन्द्र का मुख देखेंगे और प्रांतीय वित्त मंत्रियों की दशा हम अभागे भिखारियों के समान बना देंगे जो केन्द्रीय वित्त-मंत्री के द्वार पर ही पड़े रहेंगे। मेरे विचार में यह बहुत वांछनीय स्थिति नहीं है।

मुझे प्रसन्नता है कि इस उपबन्ध में एक रियायत कर दी गई है। वह रियासत यह है कि वर्तमान व्यवस्था 31 मार्च 1951 तक चल सकती है। मेरा कहना यह है कि अच्छा होता यदि यह अवधि उस समय तक बढ़ा दी जाती जब कि प्रथम वित्त-आयोग प्रांतों तथा केन्द्र के वित्तीय संबंधों में आवश्यक परिवर्तन कर चुका होता। हम निस्संदेह उस समय तक ठहर सकते थे। इसमें डेढ़ के स्थान पर तीन

लग जाते, जो छोटी-सी बात है। अन्यथा मैं अनुभव करता हूं कि प्रांतों के वित्तीय ढांचे में अवश्य ही गड़बड़ पड़ेगी। यह स्मरण रखना चाहिये कि इस गड़बड़ के प्रभावों से केन्द्र भी अछूता नहीं रह सकता।

आखिर केन्द्र तथा प्रांत एक ही व्यवस्था के अंग हैं। उदाहरण के लिये इस समय चीनी की स्थिति को लीजिये। केन्द्रीय सरकार ने दिल्ली से माल पर ताला लगाने का आदेश जारी किया, किन्तु लूट और गोलीकांड कलकत्ता और बम्बई में हुए। अतः हमें याद रखना चाहिये कि प्रांतों की आर्थिक कठिनाइयों से जो भी गड़बड़ होगी उसका अंततोगत्वा यही प्रभाव होगा कि केन्द्र की शक्ति कम होगी, चाहे केन्द्र कितना भी शक्तिशाली क्यों न हो। और जैसा कि मैं एक बार कह चुका हूं, शक्तिशाली केन्द्र निर्बल एककों के सहारे खड़ा नहीं रह सकता।

***श्री प्रभु दयाल हिम्मतसिंहका** (पश्चिमी बंगाल : जनरल): श्रीमान, मैं अनुच्छेद 261क के विषय में डॉ. अम्बेडकर के संशोधन का समर्थन करता हूं। इस अनुच्छेद की रचना बहुत-सी कठिनाइयों को दूर करने के लिये की गई हैं तथा इन परिस्थितियों में यही सर्वोत्तम दिखाई देता है। मुझे तो व्यक्तिगत रूप से यही अच्छा लगता है कि केन्द्र को ही प्राधिकृत कर दिया जाता कि वही कर लगाता, उसे स्रोत पर उगाहता—आयात या उत्पादन केन्द्रों पर—तथा उसे प्रांतों में बांट देता। इससे कम स्थानों पर हिसाब किताब रखने का खर्च पड़ता, किन्तु प्रांतीय सरकारें इस बात पर सहमत नहीं हुईं कि केन्द्र ही कर लगा कर फिर उसे बांटे, अतः अब जो अनुच्छेद रखा गया है वही सर्वोत्तम है। इसका उद्देश्य कुछ असंगतियों को हटा देना है, जो कुछ प्रांतों के विधान में हैं जहां प्रत्येक विक्रय पर करारोपण हो जाता है चाहे उस वस्तु का दूसरे प्रांत में जाकर उपभोग होता है। इसी प्रकार इससे कुछ अनुच्छेदों पर कर नहीं रहेगा जो एक प्रांत में पैदा होकर दूसरे प्रांत में जाते हैं—अर्थात् अंतर्राज्यिक क्रय-विक्रय पर कर नहीं लग सकेगा। इस समय, श्रीमान, मुझे दो मामलों का ज्ञान है जहां बंगाल में एक मिल पर, जो उड़ीसा में स्थित है, 25 लाख रुपये कर के रूप में लगाये गये हैं। चाहे वस्तुएं बंगाल के अतिरिक्त अन्य प्रांतों में बेची गईं थीं, फिर भी बंगाल ने 25 लाख रुपये कर लगा दिया, केवल इस कारण कि कम्पनी का सदर मुकाम बंगाल में है। इस धारा से ऐसे करों को हटा दिया जायेगा जो उन विक्रयों पर लगते हैं जो प्रांत के बाहर होते हैं।

जहां तक पं. हृदय नाथ कुंजरू का संबंध है, बंगाल ने इस कठिनाई को पहले ही दूर कर दिया है क्योंकि उसने पंजीबद्ध दुकानदारों की व्यवस्था कर दी है। जब दो पंजीबद्ध दुकानदारों के बीच माल बिकता है तब कोई विक्रय कर नहीं लिया जाता। जब माल किसी ऐसे व्यक्ति को बेचा जाता है जो पंजीबद्ध दुकानदार नहीं है तभी कर लिया जाता है; और इसलिये यह समझ लिया जाता है कि वह व्यक्ति, जो पंजीबद्ध दुकानदार नहीं है, उपभोग के लिये खरीद रहा है। अतः, बंगाल ने उन लोगों के लिये, जो क्रय पर कर नहीं देना चाहते, पंजीयन आवश्यक बनाकर इस कठिनाई को दूर कर दिया है।

[श्री प्रभु दयाल हिम्मतसिंहका]

मैं डॉ. अम्बेडकर द्वारा पेश किये हुए अनुच्छेद का समर्थन करता हूं। विविध प्रांतों ने कुछ आशंकाऐं अभिव्यक्त की हैं, किन्तु मैं नहीं समझता कि उनका कोई औचित्य है। उन्हें यह मालूम होना चाहिये कि वे सुरक्षित रहेंगे क्योंकि प्रत्येक प्रांत में कुछ वस्तुऐं होती हैं जो अन्य प्रांतों को उपभोग के लिये जाती हैं। इसी प्रकार उन्हें पता होना चाहिये कि बहुत-सी ऐसी वस्तुऐं हैं जो विविध प्रांतों में उपभोग के लिये आती हैं। उदाहरण के लिये बम्बई के कपड़े का ही मामला लीजिये जब बंबई से कपड़ा जायेगा तब वे कोई विक्रय कर नहीं लगा सकेंगे और बिहार, जो बम्बई से बहुत-सा कपड़ा मंगवाता है उस पर कर वसूल कर सकेगा अतएव, अन्ततोगत्वा, ऐसा हिसाब बैठ जायेगा कि सब प्रांतों को लगभग वही मिल जायेगा जो उन्हें अब मिलता रहा है। सब कुछ एक दो वर्ष में ठीक-ठाक हो जायेगा और किसी भी प्रांत को कोई हानि नहीं होगी, किन्तु साथ ही समस्त प्रक्रिया सादी बन जायेगी। अतः मैं डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तावित रूप में इस अनुच्छेद का समर्थन करत हूं।

***श्री गोपाल नारायण** (संयुक्त प्रांत : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं अपने मित्र श्री महावीर त्यागी के संशोधन का समर्थन करने खड़ा हुआ हूं। उन्होंने ठीक बात कही है। कर लगाने में या करारोपण का कोई प्रस्ताव रखने में पहला विचार यह होना चाहिये कि क्या वह जनता के हित में है। हमें कर लगाते समय यह देखना है कि वह जनता के जनसाधारण के हित में खर्च किया जाये। यह तर्क किया जाता है कि हमने मद्य-निषेध किया है और इस नये कर का उद्देश्य उस कमी को पूरा करना है। मेरे अपने प्रांत में केवल आठ जिलों में हमने मद्य-निषेध किया है और वह भी सफल नहीं है। यह किसी अर्थ में मद्य-निषेध नहीं है।

हमें ऐसे करारोपण की आवश्यकता क्यों है? मैं कह सकता हूं, श्रीमान, कि चोटी पर भारी व्यय होने के कारण ही हम नये कर लगा रहे हैं। उस दिशा में हम केन्द्र में तथा प्रांतों में बचत नहीं कर रहे हैं। हम देखते हैं कि बचत समितियां स्थापित हुईं तथा उन्होंने अपने प्रतिवेदन पेश किये। मेरे अपने प्रांत में उन्होंने प्रतिवेदन पेश किया है कि हमें अपने खर्च में 6 करोड़ की कमी करनी चाहिये, और इस छह करोड़ में से मैंने देखा कि चार करोड़ तो सड़कों और मकानों के पूंजीगत व्यय में से कम करना था और शेष दो करोड़ अन्य दिशाओं से। यह पर्याप्त नहीं है। इस नये करारोपण से पहले हमें केन्द्र में तथा प्रान्तों में बचत करने का प्रयत्न करना चाहिये। हम जनसाधारण का कोई भला नहीं कर रहे हैं, वरन् उन पर करों का बोझ डालते जा रहे हैं। मेरे मित्र श्री त्यागी ने सभा का ध्यान इसी ओर आकृष्ट किया है। उन्होंने कहा है कि हमें देखना चाहिये कि इस कर से जनसाधारण को कोई लाभ होगा या नहीं। मेरे विचार में शासन के, प्रशासन के भारी खर्च के कारण उन पर अनावश्यक भार डाला जा रहा है। पहले हमें उसे कम करना चाहिये और फिर इस कर को लगाने का विचार करना चाहिये।

मैं एक बात और कहूंगा। डॉ. अम्बेडकर के संशोधन में कुछ भेदभाव है। कुछ प्रांतों को उससे हानि पहुंचेगी। उस संशोधन में संयुक्त प्रांत, बिहार और मध्य प्रांत को सर्वाधिक हानि होगी। मेरे विचार में प्रांत और प्रांत के बीच कोई भेदभाव नहीं

होना चाहिये। यदि प्रांतों को हानि हो तो सभी प्रांतों को समान रूप से होनी चाहिये। एक प्रांत को हानि होगी और शायद दूसरे प्रांत को लाभ न हो। मैं डॉ. अम्बेडकर से अनुरोध करता हूं कि वे श्री त्यागी के संशोधन को स्वीकार कर लें।

इन थोड़े से शब्दों के साथ मैं श्री महावीर त्यागी द्वारा प्रस्तावित संशोधन का समर्थन करता हूं।

***श्री युधिष्ठर मिश्र** (उड़ीसा के राज्य): श्रीमान, अब प्रश्न पर मत लिये जायें।

***कई माननीय सदस्य:** नहीं नहीं।

***श्री महावीर त्यागी:** आप कृपया स्वविवेक का प्रयोग करें, श्रीमान। यह मामला बहुत महत्वपूर्ण है।

***अध्यक्ष:** आप तो पहले ही बोल चुके हैं और आपको फिर अवसर नहीं मिलेगा। मुझे समाप्ति प्रस्ताव पर मत लेने हैं।

प्रश्न यह है:

"कि प्रश्न पर अब मत लिये जायें।

प्रस्ताव स्वीकृत हो गया।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान, सदन के समक्ष तीन संशोधन हैं: पहला संशोधन मेरे मित्र प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना का है। उनके संशोधन के अनुसार यह प्रस्थापना है कि विक्रय कर लगाने की शक्ति संसद में होनी चाहिये। इस प्रस्ताव पर दो मूल आपत्तियां हैं। पहली बात तो यह है कि इस मामले पर प्रांतीय मुख्य मंत्रियों तथा भारत सरकार के वित्त-विभाग में यह प्रस्थापना की गई थी कि विक्रय कर के आरोपण में जो कठिनाइयां होती हैं उन्हें दूर करने के लिये यह अधिक अच्छा हो यदि वह कर केन्द्र द्वारा ही लगाया जाये तथा उगाहा जाये और किसी मान्य सिद्धान्तों के अनुसार या किसी आयोग के प्रतिवेदन के आधार पर प्रांतों में बांट दिया जाये। सौभाग्य से या दुर्भाग्य से, प्रांतीय मुख्य मंत्रियों ने एक होकर इस सिद्धान्त का विरोध किया और मेरे विचार में श्रीमान, मेरे दृष्टिकोण से उनका विनिश्चय ठीक था।

यद्यपि मैं यह कहने के लिये तैयार हूं कि संविधान के मसौदे की योजना में जो वित्तीय व्यवस्था रखी गई है वह अन्य सब वित्तीय व्यवस्थाओं से, जिनका मुझे ज्ञान है, अच्छी है, किंतु मेरे विचार में यह तो कहना ही होगा कि उसमें एक त्रुटि है। त्रुटि यह है कि प्रांत बहुत अधिक हद तक अपने साधनों के लिये केन्द्र द्वारा दिये गये अनुदानों पर निर्भर होंगे। हम सबको यह मालूम ही है कि उत्तरदायी शासन के काम करने का एक तरीका यह भी है कि विधान मंडल को धन-विधेयक को परास्त कर देने की शक्ति प्राप्त होती है। हमने जो योजना रखी है उसके अधीन प्रांत का धन-विधेयक बहुत छोटी-सी चीज होगी। वे जो कर प्रत्यक्ष

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

रूप से लगा सकते हैं वे बहुत साधारण प्रकार के हैं और विधान-मंडल करों को मंजूर करने से इन्कार करके सरकार में 'अविश्वास' प्रकट करने के इस सामान्य उपाय से वंचित हो जाएगा। अतः मेरे विचार में बहुत से ऐसे साधनों को, जिन पर प्रांत निर्भर होते हैं, केन्द्र में एकत्र कर दिया गया है और यह संविधानिक शासन के दृष्टिकोण से अभीष्ट है कि कम से कम एक महत्वपूर्ण राजस्व-साधन को प्रातों के पास रहने दिया जाये। अतः मेरे विचार में, उस दृष्टिकोण से, प्रांतों के हाथों में विक्रय-कर रहने देने की प्रस्थापना अत्यन्त औचित्यपूर्ण है। ऐसी स्थिति में मेरे विचार में मेरे मित्र प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना का संशोधन गिर जाता है।

मेरे मित्र, श्री त्यागी के संशोधन के संबंध में, मैं यह कहना चाहता हूं कि उन्होंने जो कुछ कहा है उससे मुझे बहुत सहानुभूति है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि विक्रय-कर जब 1937 में आरम्भ हुआ था तब वह महत्वपूर्ण राजस्व साधन नहीं था। मैंने बंबई तथा मद्रास के विषय में आंकड़ों पर विचार किया है। 1937 में मद्रास में लगभग 2.35 करोड़ रुपये कर था। आज वह लगभग 14 करोड़ है। बंबई के विषय में भी यही स्थिति है कि 1937 में कर लगभग 3.5 करोड़ था, और आज वह लगभग 14 करोड़ है। यह स्वीकार करना होगा कि यह बहुत बड़ी वृद्धि है और मैं नहीं समझता कि राजस्व उगाहने के लिये विक्रय कर से खेल खेलना वांछित है, क्योंकि कर व्यवस्था में, जहां तक मेरा ख्याल है, दो सिद्धांतों के आधार पर परिवर्तन किया जा सकता है। एक तो यह है कि विविध वर्गों में अधिकतम न्याय हो। यदि एक श्रेणी पर दूसरी श्रेणी के अधिक कर हों तो व्यवस्था में परिवर्तन करके भार को बराबर बना देना और औचित्यपूर्ण होगा।

दूसरा महत्वपूर्ण सिद्धांत जो, मेरे विचार में, समस्त विश्व में मान्य है, यह है कि कोई करारोपण व्यवस्था ऐसी नहीं होनी चाहिये कि उससे जनता का जीवन-स्तर कम हो, और मेरे मन में जरा भी संदेह नहीं है कि विक्रय-कर का प्रांत की जनता के जीवन-स्तर से बहुत प्रगाढ़ संबंध है। किन्तु अपने मित्र के साथ पूर्ण सहानुभूति होते हुए भी मैं देखता हूं कि यदि उनके संशोधन को स्वीकार कर लिया जायेगा तो उसका अर्थ यह होगा कि प्रांतों की विक्रय कर लगाने की शक्ति स्वतंत्र और अबाध नहीं रहेगी। उस पर संसद द्वारा नियत उच्चतम सीमा रहेगी। मेरा ख्याल है कि यदि हम प्रांतों को विक्रय कर लगाने देते हैं तो प्रांतों को यह भी स्वतंत्रता होनी चाहिये कि वे प्रांत की बदलती हुई स्थिति के अनुरूप विक्रय कर की दर को घटा-बढ़ा सकें, केन्द्र की ओर से उच्चतम सीमा नियत कर देने से विक्रय कर को क्रियान्वित करने में बहुत बाधा पड़ेगी। मुझे संदेह नहीं है कि मेरे मित्र श्री त्यागी, यदि प्रांतीय विधान मंडल में जायें तो वे प्रांतीय सरकारों को यह बता समझा कर अपने आदर्शों को पूरा कर सकते हैं कि विक्रय कर का जनता के जीवन-स्तर पर बहुत प्रभाव पड़ता है, अतः उन्हें उसका आरोपण करने में बहुत सावधानी बरतनी चाहिये।

***श्री महावीर त्यागीः** क्या मैं आपके लिये इतना असुविधाजनक बन गया हूं?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** कदापि नहीं। यदि मैं कोई मुख्य मंत्री होता हो मैं भी वही रुख अपनाता जो आपने अपनाया है।

अब मैं अपने माननीय मित्र पं. कुंजरू के संशोधन को लेता हूं तो मेरा यह ख्याल है कि उनके संशोधन का प्रयोजन उप-खंड (1) की व्याख्या से लगभग पूरा हो जाता है, क्योंकि उसमें भी हमने इसी बात पर जोर दिया है कि विक्रय कर का मूलत: उपभोग पर कर होना चाहिये; और मैं नहीं समझता कि उनके संशोधन से इस मामले में कोई ज्यादा सुधार होगा।

मेरे विचार में, केवल एक बात है, जिसके विषय में मैं एक शब्द कहना चाहता हूं। मैं जानता हूं कि कुछ ऐसे 'मित्र हैं जो उप-खंड (1) की इस भाषा को पसन्द नहीं करते, 'in the course of export and in the course of import' अब मसौदा समिति ने ठीक ठीक भाषा चुनने के लिये बहुत समय खर्च किया है। जहां तक उनका संबंध है वे संतुष्ट हैं कि यही भाषा यथासाध्य सर्वोत्तम है। किन्तु मैं यह कहता हूं कि मसौदा-समिति इस भाषा पर पुन: विचार करेगी कि क्या कोई अन्य भाषा रखी जा सकती है जिससे वह आलोचना का कारण मिट सकेगी अनुच्छेद के इस भाग पर की गई है। श्रीमान मुझे आशा है कि अब सदन संशोधन को स्वीकार कर लेगा।

***अध्यक्ष:** डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तावित इस प्रस्थापना पर मत लेने से पूर्व, मैं कुछ शब्द कहना चाहता हूं, विशेषत: इसलिये कि मेरे सामने माननीय वित्त मंत्री बैठे दिखाई दे रहे हैं। मैं प्रस्तावित अनुच्छेद के पक्ष में या विपक्ष में कुछ भी नहीं कहना चाहता हूं, पर मैं यह करना चाहता हूं कि प्रांतों में काफी प्रबल भावना है कि उनके राजस्व साधनों को बहुत कम कर दिया गया है, और विशेषत: गरीब प्रांतों की यह भावना है कि आय कर का वितरण ऐसा नहीं है जिससे उन्हें संतोष हो। मैं वित्त मंत्री से कहना चाहता हूं कि वे जब आय कर के वितरण के प्रश्न पर विचार करें तब इस बात का ध्यान रखें, जिससे कि यह न कहा जा सके कि भारत सरकार की नीति ऐसी है कि जिनके पास बहुत है उन्हें बहुत दिया जाता है और जिनके पास थोड़ा है जिनसे वह थोड़ा भी ले लिया जाता है।

अब मैं विविध संशोधनों पर मत लूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि सूची 13 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 307 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 264क का खंड (2) हटा दिया जाये।"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि संशोधन सं. 425 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 264क के खंड (1) की व्याख्या में, 'for the purpose of consumption in that State' ये शब्द हटा दिये जायें, और अन्त में निम्न नया खंड जोड़ दिया जाये:—

'(4) The Union Parliament shall have power to amend the laws in respect of taxes on sale or purchase of goods with a view to

[अध्यक्ष]

bring uniformity in the laws made by the various States of the Union or in the interests of the Union as a whole, provided that no Bill for such amendment shall be moved in Parliament without the prior permission of the President, and the President before giving such permission shall obtain the views of the Government of the various States concerned.'

[(4) संघ संसद को शक्ति होगी कि वह माल के क्रय या विक्रय पर करों के विषय में विधियों को संशोधित कर सके जिससे कि संघ के विविध राज्यों द्वारा निर्मित विधियों में या समस्त संघ के हितों में एकरूपता लाई जा सके, परन्तु ऐसे संशोधन के लिये कोई विधेयक संसद में राष्ट्रपति की पूर्व अनुमति के बिना पेश नहीं किया जायेगा और राष्ट्रपति ऐसी अनुमति देने से पूर्व विविध संबद्ध राज्यों की सरकारों के विचारों का पता लगायेगा।]"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 18 के संशोधन सं. 425 में, अनुच्छेद 264-क के खंड (1) के पश्चात्, निम्न नया परन्तुक प्रविष्ट कर दिया जाये:-

'Provided that the sales tax shall not exceed Rs. 3/2 percent of the sale price.'

[किन्तु विक्रय-कर विक्रय-मूल्य के तीन रुपये दो आना प्रतिशत से अनधिक होगा।]"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 264 के खंड (1) के पश्चात्, निम्न नये खंड प्रविष्ट कर दिये जायें:—

'(1a) No law of a State shall impose or authorise the imposition of a tax on the sale or purchase of goods within a State except where such sale or purchase is made to or by a consumer.

(1b) Parliament may, by law, fix the maximum rate at which a sale tax may be levied by a State on the sale or purchase of goods.' "

[(1क) राज्य की कोई विधि राज्य के भीतर ही वस्तुओं के क्रय या विक्रय पर करारोपण न करेगी और न करना प्रधिकृत करेगी, सिवाय उस स्थिति के जब कि वह क्रय या विक्रय किसी उपभोक्ता द्वारा किया जाये।

(1ख) संसद, विधि द्वारा अधिकतम दर निश्चित कर सकती है जिससे कोई राज्य वस्तुओं के क्रय या विक्रय पर विक्रय कर लगा सकता है।]"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***अध्यक्षः** फिर मैं डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तावित मूल प्रस्थापना पर मत लेता हूं।

प्रश्न यह है:

"कि सूची 13 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 307 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 264क के स्थान पर निम्न रख दिया जाये:–

'264A. (1) No law of a State shall impose or authorise the imposition of a tax on the sale or purchase of goods where such sale or purchase takes place—

Restriction as to imposition of tax on the sale or purchase of goods.

(a) outside the State: or

(b) in the course of the import of the goods into, or export of the goods out of, the territory of India.

Explanation.—For the purposes of sub-clause (a) of this clause a sale or purchase shall be deemed to have taken place in the State in which the goods have actually been delivered as a direct result of such sale or purchase for the purpose of consumption in that State, notwithstanding the fact that under the general law relating to sale of goods the property in the goods has by reason of such sale or purchase passed in another State.

(2) Except in so far as Parliament may by law otherwise provide, no law of a State shall impose, or authorise the imposition of, a tax on the sale or purchase of any goods where such sale or purchase takes place in the course of inter-State trade or commerce:

[अध्यक्ष]

Provided that the President may by order direct that any tax on the sale or purchase of goods which was being lawfully levied by the Government of any State immediately before the commencement of this Constitution shall, notwithstanding that the imposition of such tax is contrary to the provisions of this clause, continue to be levied until the thirty-first day of March, 1951.

(3) No law made by the Legislature of a State imposing, or authorising the imposition of, a tax on the sale or purchase of any such goods as have been declared by Parliament by law to be essential for the life of the community shall have effect unless it has been reserved for the consideration of the President and has received his assent.'

वस्तुओं के क्रय या विक्रय पर करारोप के बारे में निर्बन्धन

[264-क (1) राज्य की कोई विधि, वस्तुओं के क्रय और विक्रय पर, जहां ऐसा क्रय या विक्रय:-

(क) राज्य के बाहर, अथवा

(ख) भारत राज्य-क्षेत्र में वस्तुओं के आयात अथवा उसके बाहर निर्यात के दौरान में,

होता है वहां कोई करारोपण, न करेगी और न करना प्राधिकृत करेगी।

व्याख्या.—उपखंड (1) के प्रयोजनों के लिये क्रय या विक्रय उस राज्य में हुआ समझा जायेगा जिसमें ऐसे क्रय या विक्रय के परिणामस्वरूप उसी राज्य में उपयोग के लिये वस्तुओं का भुगतान उस राज्य में किया गया है चाहे फिर वस्तु-विक्रय संबंधी साधारण विधि के अधीन उन वस्तुओं का स्वत्व हस्तांतरण ऐसे क्रय या विक्रय के कारण किसी दूसरे राज्यों में क्यों न हो चुका हो।

(2) जहां तक संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबन्धित करे उसके अतिरिक्त राज्य की कोई विधि किन्हीं वस्तुओं के क्रय या विक्रय पर वहां कोई करारोपण न करेगी और न करना प्राधिकृत करेगी जहां ऐसा क्रय-विक्रय अन्तर्राज्यिक व्यापार या वाणिज्य के दौरान में होता है:

परन्तु राष्ट्रपति आदेश द्वारा निदेश दे सकेगा कि वस्तुओं के क्रय या विक्रय पर कोई कर, जो किसी राज्य की सरकार द्वारा इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले विधिवत् उद्गृहीत किया जा रहा था, इस बात के होते हुए भी कि ऐसे कर का आरोपण इस

खंड के उपबन्धों के प्रतिकूल हैं, 1951 के मार्च के 31वें दिन तक उद्गृहीत किया जाता रहेगा।

(3) किसी राज्य के विधान-मंडल द्वारा निर्मित कोई विधि ऐसी वस्तुओं के, जो संसद द्वारा समुदाय के जीवन के लिये आवश्यक घोषित की गई है, क्रय या विक्रय पर करारोपण करती या करना प्राधिकृत करती है, तब तक प्रभावी न होगी जब तक कि राष्ट्रपति के विचार के लिये रक्षित किये जाने पर उसे उसकी अनुमति प्राप्त न हो गई हो।]"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

संशोधित रूप में अनुच्छेद 264क संविधान में जोड़ दिया गया।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं चाहता हूं कि आप अनुच्छेद 280क को ले लें।

***पं. हृदय नाथ कुंजरू:** उस अनुच्छेद के आज लेने पर मुझे प्रबल आपत्ति है। मुझे यह संशोधन आज प्रात:काल ही मिला है। इसमें जो विषय रखा गया है वह बहुत महत्वपूर्ण है और हमें इस पर विचार करने के लिये तथा संशोधनों को पेश करने के लिये समय मिलना चाहिये, यदि हम ऐसा करना चाहें।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** इसके अतिरिक्त, इस अनुच्छेद का प्रयोजन एक नये प्रकार का आपात रखना है जो किसी व्यवस्था में भी अज्ञात है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान, मुझे आशा है कि आप इन बातों से सभा के कार्य में बाधा न पड़ने देंगे। अब, यदि माननीय सदस्य को संशोधन नौ बजे भी मिला है तब भी उनके पास 9 से बारह तक का समय था। मैं नहीं समझता कि इस संशोधन में कोई अस्पष्ट बात है। मेरे माननीय मित्र पं. कुंजरू से बहुत कम बुद्धि वाला व्यक्ति भी उसे पहली बार पढ़कर समझ सकता था। इसमें मुझे तनिक भी संदेह नहीं है।

***पं. हृदय नाथ कुंजरू:** श्रीमान, यह बहुत महत्वपूर्ण मामला है और डॉ. अम्बेडकर की अधीरता तथा कठोरता के कारण सदस्यों के अधिकारों का—उन अधिकारों का जो उन्हें नियमों के अधीन प्राप्त हैं—हनन नहीं होने देना चाहिये। मैं मांग करता हूं, श्रीमान कि हमें इस संशोधन पर विचार करने के लिये अधिक समय मिलना चाहिये, चाहे डॉ. अम्बेडकर की स्पष्ट इच्छा संशोधन को सदन में से जल्दबाजी में से पारित करवाने की है।

***अध्यक्ष:** मेरा सुझाव है कि हम उसी क्रम से चलें जिससे वह कार्यावली में है और अनुच्छेद 274घघ को ले लें।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं उसके लिये तैयार हूं, श्रीमान, किन्तु मुझे कहना होगा कि हमारे पास समय इतना कम है कि मैं नहीं समझता कि इन नियम-संबंधी बातों को आवश्यकता से अधिक महत्व देना चाहिये।

***पंडित हृदय नाथ कुंजरू:** यह क्षोभ की बात है कि मसौदा समिति के सभापति से आशा की जाती है कि वे अपनी स्थिति के कारण दूसरों के अधिकारों को भी समझेंगे, किन्तु वे उनका मूल्य इतना कम बताते हैं।

अनुच्छेद 274 घघ

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान, मैं प्रस्ताव करता हूं:—

"कि सूची 17 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 400 के निर्देश से, अनुच्छेद 27 घ के पश्चात् निम्न अनुच्छेद प्रविष्ट कर दिया जाये:—

'274DD. Notwithstanding anything contained in the foregoing provisions of this Part or in any other provisions of this Constitution, any State which before the commencement of this Constitution was levying any tax or duty on the import of goods into the State from other States or on the export of goods from the State to other States may, if an agreement in that behalf has been entered into between the Government of India and the Government of that State, continue to levy and collect such tax or duty subject to the terms of such agreement and for such period not exceeding ten years from the commencement of this Constitution as may be specified in the agreement:

Power of certain States in Part III of the First Schedule to impose restrictions on trade and commerce by the levy of certain taxes and duties on the import of goods into or the export of goods from such States.

Provided that the President may at any time after the expiration of five years from such commencement terminate or modify any such agreement if, after consideration of the report of the Finance Commission constituted under article 260 of this Constitution, he thinks it necessary to do so.'

[274घघ. इस भाग के पूर्वगामी उपबन्धों में, अथवा इस संविधान के अन्य उपबन्धों में, किसी बात के होते हुए भी प्रथम अनुसूची के भाग 3 में उल्लिखित कोई राज्य, जो इस संविधान के प्रारम्भ से पहले दूसरे राज्यों से उस राज्य में वस्तुओं के आयात पर अथवा उस राज्य से दूसरे राज्यों को वस्तुओं के निर्यात पर कोई कर या शुल्क उद्गृहीत करता था, ऐसे कर या शुल्क को, यदि भारत सरकार और उस राज्य की सरकार में उस लिये करार हो जाये तो, ऐसे करार के निर्बंधनों के अधीन रहते हुए तथा इस संविधान के प्रारम्भ से दस वर्ष से अधिक ऐसी कालावधि के लिये, जैसी कि करार में उल्लिखित हो, उद्गृहीत और संगृहीत करता रहेगा।

प्रथम अनुसूची के भाग 3 के कतिपय राज्यों की ऐसे राज्यों में वस्तुओं के आयात तथा से वस्तुओं के निर्यात पर कुछ कर तथा शुल्क लगा कर व्यापार और वाणिज्य पर निर्बन्धनों के आरोपण की शक्ति।

परन्तु ऐसे प्रारम्भ से पांच वर्ष की समाप्ति के पश्चात् किसी समय भी यदि राष्ट्रपति अनुच्छेद 260 के अधीन गठित वित्त आयोग के प्रतिवेदन पर विचार करने के पश्चात् ऐसे किसी करार का अन्त या रूपभेद करना आवश्यक समझे तो वह ऐसा कर सकेगा।]

श्रीमान, यह नया अनुच्छेद तो अनुच्छेद 258 के परिणामस्वरूप ही है, जिसे सदन स्वीकार कर चुका है तथा जिससे भारत सरकार को शक्ति दे दी गई है कि वह किसी थोड़े से समय के लिये कुछ वित्तीय परिवर्तन करने के प्रयोजनों के लिये भाग 3 के राज्यों से समझौते कर सकती है।

***प्रोफेसर शिब्बन लाल सक्सेना:** श्रीमान, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि संशोधन सं. 428 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 274घघ के परन्तुक में 'President' शब्द के स्थान पर 'Parliament' शब्द रख दिया जाये तथा 'he thinks' इन शब्दों के स्थान पर 'it thinks' ये शब्द रख दिये जायें।"

मैं केवल यही चाहता हूं कि राज्यों के साथ वित्तीय समझौते के विषय में संसद को प्राधिकार मिलना चाहिये, राष्ट्रपति को नहीं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रास : जनरल): श्रीमान, प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना ने जो एक मात्र आपत्ति उठाई है उसके विषय में मैं कहना चाहता हूं कि हमने अनुच्छेद 258 की योजनानुसार कार्य किया है, जिसे सदन पहले ही पारित कर चुका है, और जिसमें लिखा है कि राष्ट्रपति ही समझौते करेगा, संसद नहीं।

वास्तव में यदि हम राज्य के नरेश के साथ या राज्य की कार्यपालिका के साथ समझौता करने के लिये संसद को बीच में लायेंगे तो इससे संसद की स्थिति गिर जायेगी जो राज्यों पर सर्वोच्चता की है। संसद राज्यों के साथ समझौते में पक्षक नहीं बन सकती: यह तो कार्यपालिका संबंधी व्यवस्था है जो उसी योजनानुसार बनाई गई है जिसकी वी.टी. कृष्णमाचारी समिति के प्रतिवेदन में सिफारिश की गई थी। उस समिति ने वित्तीय एकीकरण की अपनी योजना में उन भू-चुंगियों को लगभग हटा दिया है जो विभिन्न राज्यों में लगाई जाती थीं। केवल दो अपवाद रखे गये हैं, और एक मात्र अपवाद राजस्थान है जहां संघ के आंतरित वित्तीय ढांचे को देखने से पता लगा कि यदि राज्य का आयव्ययक संतुलित रखना है तो भारत सरकार को सहायता के रूप में या अनुदान के रूप में भारी राशियां देनी होंगी। अतएव उन्होंने आरम्भ में पांच वर्ष के लिये—शायद अन्त में यह दस वर्ष ही रहे—उन्हें भू-शुल्क लगाने की अनुमति दे दी है। यह मामला तो एक कार्यपालिका प्राधिकारी तथा दूसरे के बीच में तय होना है, और यदि श्री सक्सेना के संशोधन को स्वीकार किया जायेगा तो संसद की वह सर्वोच्च स्थिति नहीं रहेगी जो केन्द्र की कार्यपालिका के विषय में ही नहीं, वरन राज्यों की कार्यपालिका के विषय में भी उसे प्राप्त है। यह एक संक्रमणकालीन उपबन्ध है और उस योजना के अनुसार बना है जिसकी उस समिति ने सिफारिश की है जिसने राज्यों के वित्तों की योजना पर पूरा विचार किया है और ऐसे उपाय तथा साधन निर्धारित किये

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

हैं जिनसे यथासंभव शीघ्र ही पूर्ण एकीकरण हो सकता है। मैं यह अनुभव करता हूं कि विचाराधीन अनुच्छेद के विषय में कोई ऐसी संभव आपत्ति नहीं उठाई जा सकती जिसे सिद्ध किया जा सके।

***माननीय श्री के. सन्तानम** (मद्रास : जनरल): श्रीमान, मुझे हर्ष है कि इस अनुच्छेद के मसौदे में बहुत कुछ सुधार कर दिया गया है और इस अनुच्छेद के सिद्धांत तथा उद्देश्य का निश्चय ही अनुमोदन करता हूं। किन्तु इस संबंध में एक बात पर विचार करना है। इसमें लिखा है "कोई राज्य जो इस संविधान के आरम्भ से पहले दूसरे राज्यों से उस राज्य में वस्तुओं के आयात पर अथवा उस राज्य से दूसरे राज्यों को वस्तुओं के निर्यात पर कोई कर या शुल्क उद्गृहीत करता था।" मान लीजिये कुछ वस्तुएं बंबई बंदरगाह पर आती हैं और सीधी राजस्थान चली जाती हैं जहां उन पर भू-शुल्क लग सकता है। क्या वह अन्य राज्यों से राजस्थान को वस्तुओं के आयात की परिभाषा में आयेगा? वह भारत के बाहर से राजस्थान में आयात है। मेरे विचार में वर्तमान समझौतों के अनुसार ऐसी वस्तुओं पर भी भू-शुल्क लग सकता है। अत: मैं नहीं जानता कि क्या 'अन्य राज्यों को' और इसी प्रकार 'अन्य राज्यों से' इन शब्दों की आवश्यकता है या नहीं। वे सर्वथा अनावश्यक प्रतीत होते हैं। हमें केवल उन वस्तुओं के भू-शुल्क से मतलब है जो राज्य में आती हैं या राज्य से बाहर जाती हैं। वे कहां जाती हैं और कहां से आती हैं, मेरे विचार में, महत्वपूर्ण बातें नहीं हैं जहां तक कि हमारे इस उद्देश्य विशेष का संबंध है, और क्योंकि सब बातें उस समझौते में स्पष्ट परिभाषित होती हैं, अत: मेरे विचार में हमें ऐसे शब्द नहीं रखने चाहिये जिनसे व्यापारियों को कर से बचने का रास्ता मिल सके। क्योंकि वस्तुएं बम्बई से आती हैं अत: वे कहेंगे कि वे भारत के किसी राज्य से नहीं आतीं और वे बाहर से आती हैं और इस लिये उन पर समझौते के अधीन भू-शुल्क नहीं लगा ने चाहिये। मैं चाहता हूं कि मसौदा समिति इस बात पर विचार करे और देखे कि कर से बचने के लिये कोई मार्ग न रह जाये। आशा है मेरी बात स्पष्ट हो गई होगी। मेरी आपत्ति यह है कि 'अन्य राज्यों से' और 'अन्य राज्यों को' इन शब्दों को, जो इस खंड के प्रयोजन के लिये सर्वथा अनावश्यक हैं, हटा दिया जाये और इस प्रकार मुकदमेबाजी और कर से बचने का एक मार्ग बंद कर दिया जाये।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** इसमें वर्तमान राज्यों को ध्यान में रखा गया है, जहां वे उन वस्तुओं पर शुल्क लगाते हैं जो राज्यों में आती हैं, चाहे वे बाहर से आयें या अन्दर से आयें, और यह तो केवल...

***माननीय श्री के. सन्तानम:** इस खंड का यह अर्थ होगा कि यह उन वस्तुओं पर लागू है जो भारत के किसी राज्य से दूसरे राज्य में जाये और यदि वस्तुएं बाहर से आयें और किसी राज्य में प्रविष्ट हों तो यह खंड लागू नहीं होगा और इसलिये सम्बद्ध राज्य उन पर भू-शुल्क नहीं लगा सकेगा। राज्य को भू-शुल्क लगाने से वंचित रखने की हमारी इच्छा नहीं है, अत: इस पर विचार किया जाये।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** आखिर उस समझौते का उद्देश्य कुछ अधिकार देना ही तो है।

***माननीय श्री के. सन्तानमः** वह संविधान के खंड से सीमित है। यदि खंड से शुल्क लगाना वर्जित हो तो इस खंड के विरुद्ध कोई समझौता सफल नहीं हो सकता। इसी प्रकार मेरा सुझाव है कि हमें इस खंड का क्षेत्र विस्तृत बना देना चाहिये और समझौते को लागू होने देना चाहिये।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** हम इसे देख लेंगे।

***श्री राज बहादुर** (मत्स्य का संयुक्त राज्य): इस अनुच्छेद पर विचार करते समय मैं इस सभा के कुछ मिनट लेकर इन शुल्कों, करों आदि के विषय में राज्य-संघों की सामान्य जनता की भावनाओं को व्यक्त करना चाहता हूं। वास्तव में जब से देशी राज्यों की जनता में राजनैतिक चेतना आई है तब से ही सीमा कर राजनैतिक विरोधियों का विशेष लक्ष्य रहा है। यह बात अकारण नहीं थी कि आयात तथा निर्यात दोनों पर सीमा-शुल्क लगाने के विरुद्ध देशी राज्यों की जनता और उनके आंदोलन खड़े हुए थे। जनता में एक विशेष प्रकार की भावना के ही कारण यह विरोध उत्पन्न हुआ था। हम सदा से ही अनुभव करते रहे हैं कि इन सीमा-शुल्कों के कारण हमारे सब व्यापार और हमारे उद्योगों को बहुत हानि पहुंचती रही है। आज भी हमें लाभ नहीं होगा। वे राज्य बड़े-बड़े नहीं थे अतः उन्हें अपने आयव्ययक को संतुलित करने के लिये सीमा-कर लगाना पड़ता था। उसके अतिरिक्त यह राज्यों के प्रभुताधिकारों का भी अंग माना जाता था। किन्तु इन सीमा-शुल्कों से जनता के हितों का तो अनुसेवन नहीं होता था।

अब जब कि इस अनुच्छेद को संविधान में रखा जा रहा है, मैं अपनी भावना को तथा देशी राज्यों की अधिकांश जनता की भावना को व्यक्त करना चहता हूं कि वे अपने राज्यों में इन सीमा-शुल्कों से खुश नहीं हैं। वास्तव में बैलों, भैंसों, ऊंटों और गधों के निर्यात पर भी ये सीमा-शुल्क लग ही जाते हैं। राजस्थान में, यदि आप एक गधे का निर्यात करना चाहें तो आपको 7 रुपये देने होंगे। यदि आप बैल का निर्यात करें तो 15 देने होंगे तथा ऊंट के 25 देने होंगे। हमारे यहां जो अतिरिक्त या बचे हुए डंगर-ढोर हैं उन्हें भी हम निर्यात नहीं कर सकते। हमारे यहां जो गधे हैं उनका भी निर्यात नहीं हो सकता जब तक कि सीमा-शुल्क के रूप में कुछ दिया न जाये। जहां तक घरेलू तथा अन्य उद्योगों का संबंध है, इन सीमा-शुल्कों के कारण उन्हें बहुत हानि पहुंची है।

अतः इस अनुच्छेद पर विचार करते समय मैं इस बात पर जोर देना चाहता हूं कि केन्द्र को हमारी सहायता करनी चाहिये। हम इन सीमा-शुल्कों को जारी रखना नहीं चाहते। हमारा प्रांत एक घाटे का प्रांत है तथा वहां स्तर बहुत नीचा है, अतः जितनी जल्दी इन सीमा-शुल्कों को तथा सीमा-शुल्क विभाग को हटा दिया जायेगा उतना ही हमारे लिये अच्छा रहेगा। आज भी ऐसे निर्बंधनों के कारण ही अन्तर्राज्यिक वाणिज्य तथा व्यापार पर प्रभाव पड़ रहा है। अन्य प्रांतों से हमारे व्यापार पर स्पष्ट ही बहुत ज्यादा प्रभाव पड़ रहा है। उपभोग की वस्तुओं पर सीमा-शुल्क लगने के कारण हमारे यहां उनका मूल्य अन्य प्रांतों से अधिक है। इन सब बातों के कारण सड़क पर सामान्य व्यक्ति या गांवों के साधारण व्यक्ति अपने जीवन में प्रति दिन इस कर से जो भार पड़ता है, उसे अनुभव करते हैं। इन शब्दों के साथ, श्रीमान, मैं नेताओं से तथा केन्द्रीय सरकार से प्रार्थना करना चाहता हूं कि वे इस बात पर विचार करें और हमारे नये संघ की सहायता करें जिससे कि हम इस रोग से यथा संभव शीघ्र छुटकारा पा सकें।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि संशोधन सं. 428 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 274घघ के परन्तुक में 'President' शब्द के स्थान पर 'Parliament' शब्द रख दिया जाये तथा 'he thinks' इन शब्दों के स्थान पर 'it thinks' ये शब्द रख दिये जाये।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 17 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 400 के निर्देश से, अनुच्छेद 274घ के पश्चात् निम्न अनुच्छेद प्रविष्ट कर दिया जाये:—

'27DD. Notwithstanding anything contained in the foregoing provisions of this Part or in any other provisions of this Constitution, any State which before the commencement of this Constitution was levying any tax or duty on the import of goods into the State from other States or on the export of goods from the State to other States may, if an agreement in that behalf has been entered into between the Government of India and the Government of that State, continue to levy and collect such tax or duty subject to the terms of such agreement and for such period not exceeding ten years from the commencement of this Constitution as may be specified in the agreement:

Power of certain States in Part III of the First Schedule to impose restrictions on trade and commerce by the levy of certain taxes and duties on the import of goods into or the export of goods from such States.

Provided that the President may at any time after the expiration of five years from such commencement terminate or modify any such agreement if, after consideration of the report of the Finance Commission constituted under article 260 of this Constitution, he thinks it necessary to do so.'

[274घघ. इस भाग के पूर्वगामी उपबन्धों में, अथवा इस संविधान के अन्य उपबन्धों में, किसी बात के होते हुए भी प्रथम अनुसूची के भाग 3 में उल्लिखित कोई राज्य, जो इस संविधान के प्रारम्भ से पहले दूसरे राज्यों से उस राज्य में वस्तुओं के आयात पर अथवा उस राज्य से दूसरे राज्यों को वस्तुओं के निर्यात पर कोई कर या शुल्क उद्गृहीत करता था, ऐसे कर या शुल्क को, यदि भारत सरकार और उस राज्य की सरकार में उस लिये करार हो जाये तो, ऐसे करार के निर्बंधनों के अधीन रहते हुए तथा इस संविधान के प्रारम्भ से दस वर्ष से अनधिक ऐसी कालावधि के लिये, जैसी कि करार में उल्लिखित हो, उद्गृहीत और संगृहीत करता रहेगा:

प्रथम अनुसूची के भाग 3 के कतिपय राज्यों की ऐसे राज्यों में वस्तुओं के आयात तथा से वस्तुओं के निर्यात पर कुछ कर तथा शुल्क लगा कर व्यापार और वाणिज्य पर निर्बन्धनों के आरोपण की शक्ति।

परन्तु ऐसे प्रारम्भ से पांच वर्ष की समाप्ति के पश्चात् किसी समय भी यदि राष्ट्रपति अनुच्छेद 260 के अधीन गठित वित्त-आयोग के प्रतिवेदन पर विचार करने के पश्चात् ऐसे किसी करार का अन्त या रूपभेद करना आवश्यक समझे तो वह ऐसा कर सकेगा।]"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि प्रस्थापित अनुच्छेद 274घघ संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकृत हो गया।

अनुच्छेद 274घघ संविधान में जोड़ दिया गया।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** यदि मेरे माननीय मित्र पं. कुंजरू को कोई आपत्ति न हो तो हम नये अनुच्छेद 280क को ले सकते हैं। उन्हें आधा घंटा और मिल चुका है।

***अध्यक्ष:** मेरे विचार में हम इसे कुछ देर में ले सकते हैं।

अनुच्छेद 302 कक

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 302क के पश्चात्, निम्न नया अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये:-

'302AA. (1) Notwithstanding anything contained in this Constitution and subject to the provisions of article 119 thereof, neither the Supreme Court nor any other court shall have jurisdiction in any dispute arising out of any provision of a treaty, agreement, covenant, engagement, *sanad* or other similar instrument which was entered into by any Ruler of an Indian State and to which the Government of the Dominion of India or any of its predecessor Governments was a party and which has or has been continued in operation after the date of commencement of this Constitution, or in any dispute in respect of any right accruing under any of the provisions of this Constitution relating to any such treaty, agreement, covenant, engagement, *sanad* or other similar instrument.

Bar of jurisdiction of courts with respect to certain treaties, agreements, etc.

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

(2) In this article—

(a) 'Indian State' means any territory recognised by His Majesty or the Government of the Dominion of India as being such a State; and

(b) 'Ruler' includes, the Prince, Chief or other person recognised by His Majesty or the Government of the Dominion of India as the Ruler of any Indian State.'

कतिपय सन्धियों, करारों इत्यादि से उद्भूत विवादों में न्यायालयों द्वारा हस्तक्षेप का वर्जन।

[302कक. (1) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी किन्तु अनुच्छेद 119 के उपबन्धों के अधीन रहते हुए न तो उच्चतम न्यायालय और न किसी अन्य न्यायालय को किसी सन्धि, करार, प्रसंविदा, वचन-बन्ध, सनद अथवा ऐसी ही किसी अन्य लिखत से, जो इस, संविधान के प्रारम्भ से पहले किसी देशी राज्य के शासक द्वारा की गई या निष्पादित की गई थी तथा जिसमें भारत डोमीनियन की सरकार या इसकी पूर्वाधिकारी कोई भी सरकार एक पक्ष थी तथा जो ऐसे प्रारम्भ के पश्चात् प्रवर्तन में है या बनी रही है, उद्भूत किसी विवाद में अथवा ऐसी संधि, करार, प्रसंविदा, वचन-बन्ध, सनद अथवा ऐसी ही किसी अन्य लिखत से सम्बद्ध इस संविधान के उपबन्धों में से किसी से प्रोद्भूत किसी अधिकार, या उद्भूत किसी दायित्व या आभार के विषय में किसी विवाद में क्षेत्राधिकार होगा।

(2) इस अनुच्छेद में:–

(क) "देशी राज्य" से अभिप्रेत है कोई राज्य-क्षेत्र जो सम्राट या भारत डोमीनियन की सरकार द्वारा, इस संविधान के प्रारम्भ से पहले, ऐसा राज्य अभिज्ञात था, तथा

(ख) "शासक" के अन्तर्गत है, राजा, मुखिया या अन्य कोई व्यक्ति जो सम्राट या भारत डोमीनियन की सरकार द्वारा, ऐसे प्रारम्भ से पहले किसी देशी राज्य का शासक अभिज्ञात था।]"

जहां तक इस अनुच्छेद का सम्बन्ध है। यह स्वयं स्पष्ट ही है। इसका मंशा यह है कि उच्चतम न्यायालय और किसी अन्य न्यायालय को किसी संधि, करार, प्रसंविदा, वचनबद्ध, सनद अथवा ऐसी ही किसी अन्य लिखत से जिसे भारत डोमीनियन की सरकार या इसकी पूर्वाधिकारी किसी सरकार ने किया हो उद्भूत किसी विवाद में क्षेत्राधिकार से वंचित कर दिया जाये.....

***एक माननीय सदस्य:** विनिश्चय कौन करेगा?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** विचार यह है कि इस मामले में न्यायालय विनिश्चय नहीं करेगा। इस पर केवल अनुच्छेद 119 के उपबंध लागू हैं जिसके अनुसार राष्ट्रपति कोई मामला उच्चतम न्यायालय को भेज कर उसकी राय पूछ सकता है और उच्चतम न्यायालय ऐसे मामले पर अपनी राय राष्ट्रपति को बताने के लिये बाध्य होगा। सदन को यह भी याद होगा कि इस संविधान में कुछ अनुच्छेद हैं, विशेषत: 302क तथा 267क हैं, जहां इन संधियों, करारों, सनदों आदि का निर्देश है, और वे भी न्यायालयों के क्षेत्राधिकार से बाहर हैं। सदन यह बात मानेगा कि यह अत्यावश्यक है कि ऐसे मामलों को न्यायालय के समक्ष पेश होने वाला विवादास्पद मामला न बनने दिया जाये, ऐसा न हो कि उससे वे प्रबंध उलट पुलट हो जायें जो संक्रमणकाल में राज्यों के शासकों तथा भारत सरकार के बीच के संबंधों का निर्धारण करने के लिये भारत सरकार ने स्वीकार किये हैं। संविधान के पारित होने के पश्चात् स्थिति स्पष्ट हो जायेगी। लगभग समस्त राज्य भाग 6क के क्षेत्र में आ गये हैं और उन पर इस संविधान के उपबन्ध लागू होंगे, और सिवाय उन संधियों आदि के जिन का स्पष्ट उल्लेख सविधान में किया गया है और जैसा कि मैं कह चुका हूं दो अनुच्छेद 267क तथा 302क हैं, उन करारों का संविधान के क्रियान्वित होने पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ेगा, और क्योंकि इस संविधान में न्यायपालिका को बहुत शक्तियां दी गई हैं, अत: आवश्यक है कि इस संविधान के पारित होने से पूर्व जो चीज हो चुकी है और जो संयोगवश संविधान के पारित होने के बाद प्रभावी हो, तो वह न्यायालय में विवाद का कारण नहीं बननी चाहिये। मेरे विचार में इस सदन के सदस्य यह समझ जायेंगे कि यह अत्यावश्यक उपबंध है कि ऐसे व्यक्ति अनावश्यक झगड़े पैदा न कर सकें जो यह अनुभव करें कि उन पर कुप्रभाव पड़ा है या उन्हें हानि हुई है और वे एसे अधिकारों को मान्यता दिलवाने के लिये न्यायालय में न जा सकें जो इस संविधान के उपबंधों से लगभग समाप्त ही हो गये हैं, सिवाय उन मामलों के जो संविधान के कुछ अनुच्छेदों से लक्षित हैं। श्रीमान, मुझे आशा है कि सदन बिना विरोध के इस अनुच्छेद को पारित कर देगा।

(संशोधन 403 पेश नहीं किया गया।)

***अध्यक्ष:** इस पर कोई संशोधन नहीं है। क्या कोई सदस्य इस अनुच्छेद के विषय में कुछ कहना चाहता है? मैं इस पर मत ले लेता हूं।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 302क के पश्चात् निम्न अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये:–

Bar of jurisdiction of courts with respect to certain treaties, agreements, etc.

'302AA. (1) Notwithstanding anything contained in this Constitution and subject to the provisions of article 119 thereof, neither the Supreme Court nor any other court shall have jurisdiction in any dispute arising out of any provision of a treaty,

[अध्यक्ष]

agreement, covenant, engagement, *sanad* or other similar instrument which was entered into by any Ruler of an Indian State and to which the Government of the Dominion of India or any of its predecessor Governments was a party and which has or has been continued in operation after the date of commencement of this Constitution, or in any dispute in respect of any right accruing under any of the provisions of this Constitution relating to any such treaty, agreement, covenant, engagement, *sanad* or other similar instrument.

(2) In this article—

(a) 'Indian State' means any territory recognised by His Majesty or the Government of the Dominion of India as being such a State; and

(b) 'Ruler' includes, the Prince, Chief or other person recognised by His Majesty or the Government of the Dominion of India as the Ruler of any Indian State.'

कतिपय सन्धियों, करारों इत्यादि से उद्भूत विवादों में न्यायालयों द्वारा हस्तक्षेप का वर्जन।

[302कक. (1) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी किन्तु अनुच्छेद 119 के उपबन्धों के अधीन रहते हुए न तो उच्चतम न्यायालय और न किसी अन्य न्यायालय को किसी सन्धि, करार, प्रसंविदा, वचन-बन्ध, सनद अथवा ऐसी ही किसी अन्य लिखत से, जो इस, संविधान के प्रारम्भ से पहले किसी देशी राज्य के शासक द्वारा की गई या निष्पादित की गई थी तथा जिसमें भारत डोमीनियन की सरकार या इसकी पूर्वाधिकारी कोई भी सरकार एक पक्ष थी तथा जो ऐसे प्रारम्भ के पश्चात् प्रवर्तन में है या बनी रही है, उद्भूत किसी विवाद में अथवा ऐसी संधि, करार, प्रसंविदा, वचन-बन्ध, सनद अथवा ऐसी ही किसी अन्य लिखत से सम्बद्ध इस संविधान के उपबन्धों में से किसी से प्रोद्भूत किसी अधिकार, या उद्भूत किसी दायित्व या आभार के विषय में किसी विवाद में क्षेत्राधिकार होगा।

(2) इस अनुच्छेद में:—

(क) "देशी राज्य" से अभिप्रेत है कोई राज्य-क्षेत्र जो सम्राट या भारत डोमीनियन की सरकार द्वारा, इस संविधान के प्रारम्भ से पहले, ऐसा राज्य अभिज्ञात था, तथा

(ख) "शासक" के अन्तर्गत है, राजा, मुखिया या अन्य कोई व्यक्ति जो सम्राट या भारत डोमीनियन की सरकार द्वारा, ऐसे प्रारम्भ से पहले किसी देशी राज्य का शासक अभिज्ञात था।]"

प्रस्ताव स्वीकृत हो गया।

अनुच्छेद 302कक संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुसूची 3

***अध्यक्षः** हम अन्य अनुच्छेदों तथा अनुसूची 3 को ले सकते हैं। वे छोटी चीजें हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** अनुसूची 3 और अन्य अनुच्छेद पहले पारित हो चुके हैं तथा उन पर पुनर्विचार होना है। हमें सदन की अनुमति लेनी होगी।

***अध्यक्षः** आप पुनरारंभ करने के लिये अनुमति मांगेंगे।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** अध्यक्ष महोदय, आज की कार्यावली में, पहली मद अनुच्छेद 13 से आरम्भ करके तीसरी अनुसूची तक लगभग सभी मदें, सिवाय अनुच्छेद 264क, 274घघ, 302कक के जो पारित हो चुके हैं तथा 280क के जो उठा रखा गया है, अन्य सब मदें उन अनुच्छेदों तथा अनुसूचियों पर पुनर्विचार करने के विषय में हैं, जो पहले पारित हो चुकी थीं। अतएव मैं प्रार्थना करना चाहता हूं कि आप सदन में इस प्रस्थापना पर मत लें कि वे इन अनुच्छेदों पर पुनर्विचार की अनुमति देना चाहते हैं या नहीं।

***अध्यक्षः** मैं मान लेता हूं कि सदन इन अनुच्छेदों पर पुनर्विचार की अनुमति देता है।

***माननीय सदस्यगणः** हां।

***अध्यक्षः** हम अनुसूची 3 को लेंगे।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रदेश तथा बरार : जनरल): अनुच्छेद.....

***अध्यक्षः** पहले हम इस अनुसूची को समाप्त कर लें।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान, मैं संशोधन 401 तथा 402 को साथ पेश करता हूं:

"कि शपथ के प्रपत्र की मद 4 में, तृतीय अनुसूची में, 'judges of the Supreme Court' इन शब्दों के पश्चात् 'and the Comptroller and Auditor-General of India' ये शब्द प्रविष्ट कर दिये जायें।"

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

"कि शपथ के प्रपत्र की मद 4 में, तृतीय अनुसूची में, 'Supreme Court of India' इन शब्दों के पश्चात्, '(or Comptroller and Auditor-General of India)' ये कोष्ठक तथा शब्द प्रविष्ट कर दिये जायें।"

यह केवल एक भूल है जो हम अब ठीक करना चाहते हैं। शपथ का जो प्रपत्र उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के लिये रखा गया है वही, सदन द्वारा, स्वीकृत हो जायेगा तो भारत के महालेखापरीक्षक के लिये भी रखा जायेगा।

***अध्यक्षः** अनुसूची 3 के इस संशोधन पर कोई संशोधन नहीं है।

प्रश्न यह है:

"कि शपथ के प्रपत्र की मद 4 में, तीसरी अनुसूची में 'judges of the Supreme Court' इन शब्दों के पश्चात्, 'and the Comptroller and Auditor-General of India' ये शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

"कि शपथ के प्रपत्र की मद 4 में, तीसरी अनुसूची में 'Supreme Court of India' इन शब्दों के पश्चात्, '(or Comptroller and Auditor-General of India)' ये कोष्ठक तथा शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

संशोधन स्वीकृत हुए।

अनुच्छेद 13

***अध्यक्षः** हम अनुच्छेद 13 को ले लेते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** क्या मैं प्रार्थना कर सकता हूं, श्रीमान.....

***श्री एच.वी. कामतः** इस संशोधन के विषय में, श्रीमान.....

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** क्या मैं प्रार्थना कर सकता हूं, श्रीमान कि आप पहली मद को, बाद में, अंत में ही ले लें।

***अध्यक्षः** हम मद 1 को बाद में लेंगे। हम अनुच्छेद 16 से आरम्भ कर सकते हैं।

अनुच्छेद 16

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान मैं संशोधन सं. 393 को पेश करता हूं जो यह है:

"कि अनुच्छेद 16 को हटा दिया जाये।"

कारण यह है कि हमने अनुच्छेद 16 को मूलाधिकारों के अध्याय से लेकर भाग 10क के अध्याय में, जिसका शीर्षक 'भारत के राज्य-क्षेत्र में व्यापार, वाणिज्य तथा समागम' है, रख दिया गया है। अब यह अनुच्छेद 274क के रूप में जरा भिन्न शक्ल में रखा गया है जो इस प्रकार है:

" 'Subject to the other provisions of this Part, trade, commerce and intercourse throughout the territory of India shall be free.'

[भाग के अन्य उपबंधों के अधीन रहते हुए भारत-राज्यक्षेत्र में सर्वत्र व्यापार, वाणिज्य और समागम अबाध होगा।]"

इस अनुच्छेद और अनुच्छेद 16 में यही अंतर है, कि अनुच्छेदों की भाषायें ही भिन्न हैं, और लिखा है कि संसद की शक्तियों के अधीन रहते हुए, व्यापार, वाणिज्य तथा समागम आदि अबाध होंगे। यह बात भाग 10क में रख दी गई है, अनुच्छेद 16 को मूलाधिकारों में रखना व्यर्थ है, अत: मैंने यह संशोधन पेश किया है।

क्या, श्रीमान, मैं इस सदन के सदस्यों को यह भी बता दूं, जिन्हें मेरे ख्याल में इस बात का पता ही है, कि इस अनुच्छेद को, जो बहुत कम अधिकार प्रदान करता है, मूलाधिकारों, में रखने के मूल विचार के पीछे एक इतिहास है। इसका कारण यह था कि जिस समय हमने मूलाधिकारों की रचना की थी उस समय हमारा ख्याल यह था कि संविधान का ढांचा दूसरा ही होगा। फिर भी जो अधिकार प्रदान किया गया है वह संसद द्वारा निर्मित विधि के अधीन होगा। अतएव इस प्रकार के अनुच्छेद के लिये, जो अन्य अनुच्छेदों के समान सच्चे अर्थ में मूलाधिकार नहीं हैं, समुचित स्थान व्यापार तथा वाणिज्य का अध्याय है। मेरे विचार में सदन को ऐसे अनुच्छेद को हटाने में कोई आपत्ति नहीं होगी तो मूलाधिकारों के अनुच्छेदों में अब व्यर्थ-सा ही है।

(संशोधन सं. 416 पेश नहीं किया गया।)

***पंडित ठाकुर दास भार्गव** (पूर्वी पंजाब : जनरल): क्या मैं श्री टी.टी. कृष्णमाचारी से एक प्रश्न पूछ सकता हूं। उनके अनुसार, अनुच्छेद 274क अब अनुच्छेद 16 का स्थान ले रहा है। क्या मैं जान सकता हूं कि अनुच्छेद 25 अनुच्छेद 274क पर लागू होगा या नहीं?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** यदि मेरे माननीय मित्र कुछ दिन ठहरेंगे तो वे देखेंगे कि मैं एक दूसरा संशोधन भी पेश करूंगा जिसमें लिखा होगा कि अनुच्छेद 25 अनुच्छेद 274क पर लागू नहीं होगा और अनुच्छेद 16 पर भी नहीं। विधि की साधारण प्रक्रिया, इस संविधान के अधीन उच्चतम न्यायालय को जो सामान्य शक्ति दी गई है कि वह यह देखें कि इस संविधान के प्रत्येक उपबन्ध का पालन किया जाये वही प्रक्रिया तथा शक्ति अनुच्छेद 274क से 274ङ तक सब पर लागू होगी।

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

कोई विशेष उपबन्ध जो लागू होता, अनुच्छेद 16 के विषय में बहुत निर्बन्धित होगा। यदि संसद विधि द्वारा उस शक्ति का न्यूनन कर देती, तो अनुच्छेद 25 क्या विशेष अधिकार प्रदान कर सकता था, क्योंकि अनुच्छेद 16 के अधीन वही चीज़ उच्चतम न्यायालय को जा सकती थी जो संसद जाने देती।

***श्री बी. दास** (उड़ीसा : जनरल): श्रीमान, जैसा कि मैं अनुच्छेद 16 को समझता हूं, वह भारत के समस्त राज्य-क्षेत्र में व्यापार, वाणिज्य तथा समागम की स्वतन्त्रता प्रदान करता है। मैंने अपने माननीय मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी की वक्तृता को बहुत ध्यान से सुना था और मैं अनुभव करता हूं कि यद्यपि हमने अनुच्छेद 274क या अन्य किसी अनुच्छेद के अधीन कुछ शक्तियां दे दी हैं फिर भी मैं इस विचार को बहुत अच्छा नहीं समझता कि मूलाधिकारों में, जिन पर हमने सदन में दो तीन बार अच्छी तरह विचार किया है, कोई परिवर्तन किया जाये। मान लीजिये कि आपने 264क द्वारा वह समान स्वतन्त्रता दे दी है जैसी कि अनुच्छेद 16 में दी गई है, फिर भी अनुच्छेद 16 को भी रहने दीजिये। हां, मैंने श्री टी.टी. कृष्णमाचारी की इस युक्ति को सुना है कि उच्चतम न्यायालय में जाकर यह तर्क करना आवश्यक नहीं है कि मूलाधिकारों में हस्तक्षेप नहीं हुआ है। किन्तु मैं स्पष्ट नहीं समझा हूं कि क्या अनुवर्ती अनुच्छेदों से वैसा ही पूर्ण न्याय होगा जैसा कि अनुच्छेद 16 में रखा गया था मैं नहीं चाहता कि संविधान निर्माण के अंतिम चरण में हम मूलाधिकारों को छेड़ें, जिन्हें हमने इतने विचार-विमर्श तथा ध्यान के बाद पारित किया था।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद** (बिहार : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं एक दो शब्द कहना चाहता हूं।

श्रीमान, मुझे सचमुच खेद है कि इस अनुच्छेद को मूलाधिकारों में से निकाल दिया गया है मेरा यह अभिप्राय है कि व्यापार तथा वाणिज्य की पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए। और न प्रांतीय विधान मंडल को और न संसद को ही इस मूलाधिकार को कम करने का अधिकार होना चाहिए। मुझे सचमुच खेद है कि यह अनुच्छेद अंशत: अनुच्छेद 274क में समाविष्ट कर दिया गया है। मैं चाहता था कि मसौदा समिति के सदस्य अनुच्छेद 274क को हटाने का संशोधन पेश करते, अनुच्छेद 16 को नहीं।

***पंडित ठाकुर दास भार्गव:** श्रीमान, अनुच्छेद 16 भी एक ऐसा उपबंध है जो अनुच्छेद 25 के प्रभाव के अंतर्गत था और यह नागरिकों का बहुत महत्वपूर्ण मूलाधिकार है कि भारत के राजक्षेत्र में समागम अबाध होगा। इससे यह निश्चय हो जाता है कि प्रांतीय सीमाओं से किसी प्रकार के आवागमन में बाधा नहीं पड़ेगी और प्रत्येक व्यक्ति भारत के गणराज्य की नागरिकता से पूरा लाभ उठा सकेगा। किन्तु क्योंकि हमने भाग 10क के कुछ उपबंधों को पारित कर दिया है अत: यह सच है कि कुछ हद तक यह स्वतन्त्रता कम कर दी गई है और जब इन अनुच्छेदों पर विचार किया जा रहा था तब मैंने कहा था कि इस अधिकार को छीना जा रहा है, किन्तु साथ ही अनुच्छेद 16 को अपने स्थान पर रहने दिया

गया था। हमें यह अधिकार प्रिय है क्योंकि यह उन अधिकारों में से है जो अनुच्छेद 25 के अधीन समुचित कार्यवाहियों द्वारा उच्चतम न्यायालय द्वारा क्रियान्वित किये जा सकते हैं, यद्यपि हमने यह विनिश्चय नहीं किया है कि यह प्रक्रियायें कैसी होंगी, क्योंकि मूलाधिकार नये उपबन्ध हैं; किन्तु फिर भी हमारा यह ख्याल है कि कोई ऐसा तरीका निकाल लिया जायेगा जिससे इस गणराज्य के नागरिकों को अनुच्छेद 25 के अन्तर्गत सस्ता और सुगम न्याय प्राप्त हो सकेगा।

अब इस अनुच्छेद को मूलाधिकारों में से निकाला जा रहा है और उसके स्थान पर 274क रखा जा रहा है। मुझे भय है कि हमें अन्यायपूर्ण उपाय द्वारा उन सस्ते उपचारों से वंचित किया जा रहा है जो अनुच्छेद 16 द्वारा हमें मिले थे। केवल यही एक धारा नहीं है जिससे सत्र के अन्त में इस सदन में अधिकारों तथा उपचारों को छीना जा रहा है। अनुच्छेद 13 पर भी एक संशोधन है। हम यह भी देख चुके हैं कि अनुच्छेद 307 के अधीन सरकार सब अधिकारों को किस प्रकार अनुकूलन तथा रूप भेद करने के बहाने, छीन रही है तथा ऐसे रूप में बदल रही है जो सरकार को उचित जान पड़ता है।

मुझे खेद है कि मैं सहमत नहीं हूं कि अनुच्छेद 16 को इस मूलाधिकार के स्थान से हटाना चाहिये, क्योंकि इसे क्रियान्वित करने में उच्चतम न्यायालय को प्राप्त समुचित कार्यवाहियां शायद आसान तथा सस्ती हों। मैं चाहता हूं कि यह अनुच्छेद 16 हटाया न जाये।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** अध्यक्ष महोदय, मुझे भय है कि मेरे मित्र पंडित ठाकुर दास भार्गव अनुच्छेद 274क के मुकाबले में अनुच्छेद 16 का समर्थन करने में गलती कर रहे हैं क्योंकि यदि वे अनुच्छेद 304 को देखेंगे जो संविधान के संशोधन के विषय में है तो उन्हें पता चलेगा कि अनुच्छेद 16 में संशोधन करने की प्रक्रिया वही है जो 274क के विषय में है। एक ओर 274क में संसद साधारणत: परिवर्तन कर सकती है, उधर अनुच्छेद से संसद को शक्ति मिल जाती है कि वह भारत के समस्त राज्यक्षेत्र में व्यापार तथा वाणिज्य की स्वतन्त्रता को सीमित करने की विधि बना सकती है। 274क में वाणिज्य की स्वतन्त्रता संविधान में संशोधन किये बिना तो, कम से कम छिन नहीं सकती, 16 से संसद को स्वतंत्रता ही मिल जाती है। आप 16 तथा 274क को साथ नहीं रख सकते क्योंकि वे असंगत हैं। एक को या दूसरे को हटाना पड़ेगा। अत: उन्हें यह निश्चय करना है। कि 16 को हटाया जाये या 274क को।

***पंडित ठाकुर दास भार्गव:** 274क एक पवित्र घोषणा है। घोषणा-आज्ञप्ति पर शायद अमल न हो सके। अनुच्छेद 25 के अधीन उपचार सस्ता और आसान है।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** 274क में लिखा है कि यह स्वतन्त्र होगा और फिर सामान्य उपचार तो है ही। किसी को अधिकार है कि वह संविधान के किसी अनुच्छेद को क्रियान्वित करवाने के लिये उच्चतम न्यायालय में जा सकता है, केवल मूलाधिकार को ही नहीं। उच्चतम न्यायालय संविधान के प्रत्येक अनुच्छेद का संरक्षक है। 16 केवल पवित्र घोषणा-मात्र जिससे संसद को सब शक्तियां दे दी गई हैं

[माननीय श्री के. सन्तानम]

अनुच्छेद 274क में लिखा है कि संविधान का संशोधन न हो तो व्यापार अबाध होगा, और उस पर केवल वे ही सीमायें होंगी जो अनुवर्ती खंडों में उपबंधित हैं। अतः संगति के लिये तथा व्यापार की स्वतन्त्रता के लिये यह आवश्यक है कि अनुच्छेद 16 हट जाना चाहिये।

***श्री कुलधर चालिहा** (आसाम : जनरल): श्रीमान, मैंने श्री सन्तानम को बहुत ध्यान से सुना है, किन्तु मैं उनकी बात समझने में या उनके विचारों को स्वीकार करने में कठिनाई अनुभव करता हूं। यह आवश्यक है कि समस्त राज्य-क्षेत्र में समागम के अधिकार अबाध होने चाहियें। ऐसे अधिकारों को सदा विधि में समाविष्ट कर देना चाहिये और यदि उन्हें छीन लिया जाये तो शायद हम महान अधिकार से वंचित हो जायेंगे जिसे बाद में कम किया जा सकता है संशोधन द्वारा हटाया जा सकता है। हम देख चुके हैं कि उसमें कैसे धीरे-धीरे परिवर्तन किया गया है—पहले एक धारा द्वारा, फिर दूसरी धारा द्वारा और तीसरी धारा द्वारा। हम उस क्रम को देख चुके हैं। यदि इसे छीन लिया गया तो हम यहां चर्चा तक भी नहीं कर सकेंगे कि हमें ऐसा अधिकार प्राप्त है। अतएव इन मूलाधिकारों को किसी प्रकार रहने देना चाहिये। इसलिये मैं इसे हटाने का विरोध करता हूं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** अध्यक्ष महोदय, बहुत आदर के साथ मेरा निवेदन है कि मैं इस संबंध में श्री सन्तानम के तर्कों को नहीं समझ सका हूं। अनुच्छेद 16 को मूलाधिकार के अंग के रूप में रखा गया था कि व्यापार अबाध होगा। फिर किसी प्रकार मसौदा समिति के दिमाग में आया कि उसने ऐसा ही एक उपबन्ध, अनुच्छेद 274क रख दिया, और शायद वह अनुच्छेद 16 के अस्तित्व को बिल्कुल ही भूल गई। यदि उसे इसका पता होता या याद होता तो 274क को पारित करते समय ही अनुच्छेद 16 का निरसन भी कर दिया जाता। किन्तु बाद में उन्होंने देखा कि अनुच्छेद 274क और 16 में पुनरावृत्ति हो गई है। मेरा निवेदन है कि अब प्रश्न यही है कि अनुच्छेद 16 को हटाया जाये या 274क को। व्यक्तिगत रूप से मैं कहता हूं कि अनुच्छेद 274क को हटाना होगा। क्योंकि संविधान में 16 की स्थिति 274क से अधिक अच्छी है। अनुच्छेद 16 अनुच्छेद 25 के उपबंधों के अधीन है जिससे यह अधिकार न्याय्य बन जाता है। यह स्पष्ट नहीं बताया गया है कि इसका क्या औचित्य है कि उसे न्याय्य अधिकारों में से हटा कर अनुच्छेद 274क में रख दिया जाये। यह बहुत संदिग्ध है और शायद इससे कई सांविधानिक वकीलों की तथा उच्चतम न्यायालय की बुद्धि चकरायेगी कि यह न्याय्य है या नहीं। यदि यह न्याय्य है तो अनुच्छेद 16 को हटा कर यहां रखने का कोई कारण नहीं है। मेरा निवेदन है कि अनुच्छेद 274 क को हटाया जाये और 16को रखा जाये जिससे कि वह स्पष्टतः न्याय्य रहे।

***पं. ठाकुर दास भार्गव:** वह समुचित कार्यवाहियों से न्याय्य होगा, घोषणात्मक दावे से अवश्यमेव न्याय्य नहीं होगा।

***श्री अलादि कृष्णस्वामी अय्यर** (मद्रास : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे मित्र श्री कृष्णमाचारी द्वारा प्रस्तावित संशोधन पर आपत्ति बिल्कुल गलतफहमी के कारण उत्पन्न हुई है। जैसा कि श्री सन्तानम पहले ही कह चुके हैं कोई उपबंध मूलाधिकारों के अध्याय में है, केवल इसी कारण उसमें कोई विशेष पवित्रता या बल नहीं आ जाता विशेषत: जब अनुच्छेद 16 में ही यह अपवाद है "Subject to any law made by Parliament"।

मूलाधिकारों में अनुच्छेद 16 की यह भाषा थी:

"Subject to any law made by Parliament, trade, commerce and intercourse throughout the territory of India shall be free."

अतएव इस अनुच्छेद में संसद को खुली छुट्टी दे दी गई थी, यद्यपि उसका नाम मूलाधिकार रखा गया है। यह ऐसा अधिकार है जिसका अतिक्रमण या न्यूनन संसद इच्छानुसार कर सकती है। अनुच्छेद 16 का प्रभाव यह था।

इस उपबंध को अंतर्राज्यिक व्यापार संबंधी अध्याय में ले जाने का कारण स्पष्ट करना अपेक्षित है। जब संविधान सभा ने केबिनेट मिशन की प्रस्थापनाओं के अन्तर्गत कार्य आरम्भ किया था तब यह अनुभव किया गया था कि यदि हम अंतर्राज्यिक उपबन्ध को मूलाधिकार के रूप में न रखेंगे तो व्यापार की स्वतन्त्रता भी न रह सकेगी। उस समय की परिस्थितियां ऐसी थीं कि हमने व्यापार-स्वातंत्र्य के खंड को मूलाधिकारों के अध्याय में रखना ही अभीष्ट समझा क्योंकि जब संविधान सभा ने अपना कार्य आरम्भ किया था तब उसकी शक्तियां सीमित थीं। इस प्रकार यह अध्याय मूलाधिकारों में रखा गया।

सदन को स्मरण होगा कि मूलाधिकारों की समिति बनी थी उस समय भारत की स्थिति के विषय में बाद के बहुत से परिवर्तन नहीं हुए थे और संविधान सभा को विस्तृत शक्तियां प्राप्त नहीं हुई थीं। अब संविधान सभा के कार्यों पर किसी प्रकार का निर्बन्धन लगाने का प्रश्न नहीं है और हम अब स्वतन्त्र तथा स्वाधीन भारत के लिये जैसा संविधान चाहें बना सकते हैं। इन परिस्थितियों में व्यापार-स्वातन्त्र्य संबंधी विषय में नये अनुच्छेद बनाये गये हैं जो अनुच्छेद 274क से आरंभ होते हैं। हमने अनुच्छेद 274क में रखा है कि भारत भर में व्यापार तथा वाणिज्य, उस भाग के उपबंधों के अधीन रहते हुए, अबाध होगा। अत: संसद द्वारा निर्मित व्यापार स्वातंत्र्य संबंधी विधान उस अध्याय के उपबंधों के अधीन होंगे।

केवल इस कारण कि व्यापार-स्वातंत्र्य का उपबंध संविधान के इस भाग में है या उस भाग में है, उस अधिकार में कोई अंतर नहीं पड़ता। अनुच्छेद 274ख, 274ग और 274घ में व्यापार-स्वातंत्र्य के आवश्यक अपवाद तथा सीमायें हैं। एक और भी बात है जो आप इस संबंध में देख सकते हैं। अनुच्छेद 274ग से व्यापार-स्वातंत्र्य के अधिकार का क्षेत्र कम होने या निर्बंधित होने की बजाय बढ़ जाता है।

[श्री अलादि कृष्णस्वामी अय्यर]

उसमें लिखा है:

"Notwithstanding anything contained in article 274B of the Constitution, neither Parliament nor the Legislature of a State shall have the power to make any law giving or authorising the giving of preference to one State over another or making any discrimination or authorising the making of any discrimination..."

इस उपबंध में राज्य सरकार तथा केन्द्रीय सरकार की शक्तियों को निर्बंधित किया गया है जिससे मूलाधिकार का क्षेत्र विस्तृत हो जाता है। यदि आप व्यापार-स्वातंत्र्य को संविधान के अर्थ में मूलाधिकार कहना चाहें।

चाहे कोई उपबंध विशेष को मूलाधिकार कहें या नहीं, मेरे मित्र पं. भार्गव ने न्याय्यता के विषय में जो आपत्ति उठाई है वह न्याय्यता भी इस बात पर निर्भर नहीं है कि कोई उपबंध मूलाधिकारों में है या संविधान में कहीं अन्यत्र है। जहां तक उच्चतम न्यायालय के क्षेत्राधिकार का संबंध है, उस संविधान के निर्वचन के विषय में पूर्ण क्षेत्राधिकार प्राप्त है। उच्चतम न्यायालय से प्रत्येक मामले में यह विनिश्चय करने के लिये कहा जा सकता है कि कोई विधि विशेष संविधान से संगत है या नहीं है।

अत: मेरा निवेदन है कि किसी अनुच्छेद के मूलाधिकारों संबंधी अध्याय में होने से उसमें कोई गुण विशेष नहीं आ जाता। मेरे विचार में जब अनुच्छेद 274 सदन के समक्ष था तब मेरे मित्र डॉ. अम्बेडकर ने बताया था कि व्यापार तथा वाणिज्य संबंधी सब उपबंधों को एक ही अध्याय में रखने से क्या लाभ होंगे। इन आधारों पर मेरा निवेदन है कि मेरे मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने जो प्रस्थापना रखी है उस पर आपत्ति में बिल्कुल कोई बल नहीं है।

***अध्यक्ष:** क्या श्री कृष्णमाचारी कुछ कहना चाहते हैं?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** नहीं, श्रीमान। श्री कृष्णस्वामी अय्यर ने सब बातों का उत्तर दे दिया है।

***अध्यक्ष:** तो फिर मैं इस पर मत लेता हूं, अर्थात संशोधन सं. 393 पर मत लेता हूं जो अनुच्छेद 16 को हटाने के विषय में है। प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 16 को हटा दिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 16 संविधान से हटा दिया गया।

अनुच्छेद 27

***अध्यक्षः** फिर हम संशोधन सं. 417 को लेते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान, मैं संशोधन सं. 394 और 417 को साथ पेश करना चाहता हूं क्योंकि वे दोनों अनुच्छेद 27 के विषय में हैं। मैं सबसे पहले सं. 394 को पेश करूंगा।

"कि अनुच्छेद 27 के खंड (क) में, 'अनुच्छेद 16' ये शब्द तथा अंक हटा दिये जायें।"

सदन ने अनुच्छेद 16 को हटाने का जो संशोधन 393 अभी स्वीकार किया है, उसी के परिणामस्वरूप यह संशोधन है।

***अध्यक्षः** हम इसे अभी निबटा देते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** हां, श्रीमान।

***अध्यक्षः** अभी-अभी जो विनिश्चय किया गया है, उसी के परिणामस्वरूप यह संशोधन है।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 27 के खंड (क) में, 'अनुच्छेद 16' ये शब्द तथा अंक हटा दिये जायें।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** अध्यक्ष महोदय, मैं अपना संशोधन सं. 417 पेश करता हूं जो इस प्रकार है:

"कि अनुच्छेद 27 के परन्तुक में, 'subject to the terms thereof' इन शब्दों के पश्चात्, 'and to any adaptations and modifications that may be made therein under article 307 of this Constitution' ये शब्द प्रविष्ट कर दिये जायें।"

श्रीमान, यह अनुच्छेद 307(2) की भाषा के कारण आवश्यक हो गया है, जिसे हम पारित कर चुके हैं, जिसमें हमने राष्ट्रपति को अधिकार दिया है कि वह विद्यमान विधियों को ऐसे अनुकूलित तथा परिवर्तित कर सकता है कि वे इस संविधान के उपबंधों से तथा मूलाधिकारों से संगत बन जायें।

***अध्यक्ष:** इस पर कोई संशोधन नहीं है। क्या कोई इस पर कुछ कहना चाहता है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** संशोधनों के लिये बिल्कुल समय ही नहीं है।

***अध्यक्ष:** यह तो 15 तारीख से चल रहा है।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** नहीं, हमें यह आज सवेरे ही मिला है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** नौ बजे।

***अध्यक्ष:** मेरे विचार में यह तो लगभग पहले संशोधनों के परिणामस्वरूप ही है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** इस संशोधन के प्रभाव की थाह पाना असम्भव है जब तक कि किसी में डॉ. अम्बेडकर जैसी प्रतिभा न हो।

***अध्यक्ष:** मैं इस पर मत ले लेता हूं।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 27 के परन्तुक में, 'subject to the terms thereof' इन शब्दों के पश्चात्, 'and to any adaptations and modifications that may be made therein under article 307 of this Constitution' शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 42

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** अध्यक्ष महोदय, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 42 के खंड (1) में, 'may be exercised by him' इन शब्दों के स्थान पर 'shall be exercised by him either directly or through officers subordinate to him' ये शब्द रख दिये जायें।"

श्रीमान, इस संशोधन के पश्चात् अनुच्छेद 42 का खंड (1) इस प्रकार बन जायेगा:

"The executive power of the Union shall be vested in the President and shall be exercised by him either directly or through officers subordinate to him in accordance with the Constitution and the law."

श्रीमान, यह आवश्यक प्रतीत हुआ है और इससे कोई गम्भीर परिवर्तन नहीं होता। यह काफी....

***माननीय श्री के. सन्तानम:** श्रीमान, क्या इसका यह अर्थ है कि विधान-मंडल द्वारा पारित विधेयक पर राष्ट्रपति के अधीनस्थ कोई अधिकारी हस्ताक्षर कर सकता है?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** खंड में लिखा है "in accordance with the Constitution and the law"। यदि संविधान और विधि से यह अनुमति हो कि विधेयकों का कोई और भी, जिसे राष्ट्रपति नियुक्त करे, प्रमाणीकरण कर सकता है तो यह भी संभव होगा।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** संशोधन से इसकी अनुमति मिल जाती है। आप संविधान से राष्ट्रपति को यह अनुमति दे रहे हैं कि वह अपने अधीनस्थ पदाधिकारियों के द्वारा अपने कृत्यों को करवा सकता है।

***अध्यक्ष:** यह कार्यपालिका सम्बन्धी शक्तियों के विषय में है, विधायिनी शक्तियों के विषय में नहीं। मेरा अनुमान है कि विधेयकों पर हस्ताक्षर करना विधायिनी शक्तियों के अन्तर्गत आता है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** हां, यह कार्यपालिका सम्बन्धी शक्तियों के विषय में है। मैं आपका आभारी हूं, श्रीमान।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** यदि आप और दूसरा उदाहरण चाहते हैं तो युद्ध की घोषणा का प्रश्न है क्या इसे मुख्य समादेशक कर सकता है? क्या यह शक्ति किसी को प्रदान की जा सकती है? मैं नहीं समझा कि इस संशोधन की अनुपस्थिति में कार्यपालिका का प्रमुख अपने पदाधिकारियों द्वारा कुछ कार्य करने की शक्ति से वंचित हो जायेगा। मैं इसे आवश्यक नहीं समझता। मैं नहीं समझता कि किसी अन्य संविधान में ऐसा उपबन्ध होगा।

***श्री एच.वी. कामत:** मैं प्रस्ताव करता हूं:

> "कि अनुच्छेद 42 के प्रस्थापित खंड (1) में, जो सूची 18 के संशोधन सं. 418 में है, 'either directly or through officers subordinate to him' ये शब्द हटा दिये जायें।"

'may' शब्द को बदल कर 'shall' बनाने पर मुझे कोई आपत्ति नहीं है। यह आवश्यक है और ठीक है।

***एक माननीय सदस्य:** आपके संशोधन की संख्या क्या है?

***श्री एच.वी. कामत:** मेरे संशोधन की कोई संख्या नहीं है, क्योंकि मैंने इसकी सूचना आज सवेरे ही दी थी। मुझे सूची 18 कल रात ही मिली थी अत: मैं उस पर अपना संशोधन आज प्रात: ही भेज सका था।

श्रीमान, जब इस अनुच्छेद पर विचार हो रहा था तब यह स्पष्ट किया गया था कि राष्ट्रपति अपनी कार्यपालिका सम्बन्धी शक्ति का प्रयोग व्यक्तिगत रूप में या सीधा नहीं करेगा, किन्तु निस्संदेह इस संविधान के अनुसार ही करेगा। राष्ट्रपति तो कार्यपालिका सत्ता का प्रतीक मात्र है। इसका यह अर्थ नहीं है कि वह दिल्ली में बैठकर ऐसे आदेश देता रहेगा कि अमुक-अमुक को बन्दी बना लिया जाये। उसके साथ या अधीन काम करने वाले मंत्री या पदाधिकारी संविधान

[श्री एच.वी. कामत]

तथा विधि के अनुसार कार्यपालिका शक्ति का प्रयोग करेंगे। मैं समझ नहीं पाता कि मेरे माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर तथा श्री टी.टी. कृष्णमाचारी इस प्रकार का संशोधन पेश करना क्यों आवश्यक समझते हैं। यह व्यर्थ है और मेरा सदन से यह निवेदन है कि 'either' से आरम्भ होने वाले तथा 'him' पर समाप्त होने वाले शब्दों को हटा दिया जाये, जिससे कि अनुच्छेद ऐसा बन जायेगा:–

"The executive power of the Union shall be vested in the President and shall be exercised by him in accordance with the Constitution and law."

हमारे प्रयोजन के लिये यही काफी है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** मेरा निवेदन है कि यह संशोधन केवल जल्दबाजी में ही नहीं रखा गया है, वरन पूर्णत: प्रयोजनहीन भी है। इसे पर्याप्त विचार के बिना ही पेश कर दिया गया है। मैं सदन का ध्यान अनुच्छेद 130 (1) की ओर आकृष्ट करूंगा जहां राज्य की कार्यपालिका शक्ति राज्यपाल में निहित की गई है और वह उसका प्रयोग संविधान तथा विधि के अनुसार कर सकता है। इसका अर्थ स्पष्टत: यही है कि वह उस शक्ति का प्रयोग संविधान के अनुसार, अर्थात् अभिकर्ताओं की सहायता से कर सकता है। वास्तव में सरकारों के बहुत से विभाग इसी प्रयोजन के लिये होते हैं जैसे न्यायालय, पुलिस, जेल आदि हैं। क्या यह मान लिया जाये कि यदि हम यह स्पष्ट नहीं करेंगे कि राष्ट्रपति अपनी शक्तियों का अभिकर्ताओं के द्वारा प्रयोग करेगा, तो उसे स्वयं व्यक्तिगत रूप से ही पहल करनी होगी? ऐसा मानना बेहूदगी बात होगी। सब बातों को स्पष्ट करने का प्रयत्न तो विस्तार की बातें कहने में अत्युक्ति करना है। मेरा निवेदन है कि जब हम राज्यपालों या राष्ट्रपति को शक्ति देते हैं तो हम उसके नाम से उसकी कार्यपालिका को काम करने देते हैं। इससे सिद्ध होता है कि राष्ट्रपति तथा राज्यपाल केवल वैधानिक सत्ताएं हैं तथा भूषणात्मक प्रतीक हैं। सब काम राष्ट्रपति के नाम से किये जाते हैं। अनुच्छेद 42 (1) का यही आशय है कि कार्यपालिका शक्ति का प्रयोग राष्ट्रपति द्वारा संविधान के अनुसार किया जा सकता है। यही स्पष्ट आशय है। फिर 'may' शब्द के स्थान पर 'shall' रखने का क्या उद्देश्य है? 'may' शब्द का प्रयोग अत्युचित है।

***श्री एच.वी. कामत:** मेरे विचार में 'shall' शब्द उस शक्ति के सांविधानिका प्रयोग के निर्देश से है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** इस प्रयोजन के लिये 'may' शब्द काफी है। इस शक्ति का प्रयोग स्वेच्छा पर निर्भर है और यदि उसका प्रयोग किया जाये तो संविधान के अनुसार होना चाहिये। राष्ट्रपति उसका प्रयोग न करे यह सम्भव है, और यदि वह करेगा तो संविधान के अनुसार ही करेगा। उस प्रयोजन के लिये 'may' शब्द काफी है। आखिरी वक्त में ही इस संशोधन की त्रुटियों को ढूंढना कठिन है। मैं पूछता हूं कि मसौदा समिति कब अपना काम समाप्त करेगी जिससे कि हमें कुछ आराम और संतोष मिल सके। हम यथासंभव शीघ्र घर जाना चाहते हैं। किन्तु मसौदा

समिति हमें ऐसा नहीं करने देगी। जैसा मैं बार-बार निवेदन कर चुका हूं, उन्हें अपना निश्चय कर लेना चाहिये तथा सदन को अपने मसौदों की पूरी रूपरेखा दे देनी चाहिये और प्रतिदिन इस प्रकार के नये संशोधन पेश नहीं करने चाहिये। सदस्यों के लिये इन परिस्थितियों में काम करना बहुत कठिन है।

***अध्यक्ष:** मैं सर अलादि कृष्णस्वामी अय्यर से कहने वाला हूं कि वे स्थिति को स्पष्ट करें। किन्तु ऐसा करने से पहले मैं उनसे एक प्रश्न पूछना चाहता हूं जो मेरे ध्यान में आया है। इसमें लिखा है 'through officers subordinate to him'। क्या इसका यह अर्थ है कि राष्ट्रपति प्रान्तों में संघ की ओर से पदाधिकारी रखेगा, या इसका यह अर्थ है कि केवल प्रान्तीय पदाधिकारी होंगे जो राष्ट्रपति के अधीनस्थ के रूप में काम करेंगे? क्या यह विचार है कि, अमरीका के समान, दो भिन्न-भिन्न प्रकार के पदाधिकारी होंगे, एक संघ के लिये और दूसरे प्रांतों के लिये?

***श्री अलादि कृष्णस्वामी अय्यर:** पूर्णत: फेडरल विषयों के लिये तो आप पूर्णत: फेडरल सरकारी अभिकरण रख सकते हैं; किन्तु समवर्ती विषयों के सम्बन्ध में आप प्रांतीय अभिकरणों से काम चला सकते हैं। यदि फेडरल सरकार प्रांतीय अभिकरणों से संतुष्ट नहीं है, तो संविधान में उपबन्ध है कि फेडरल सरकार समवर्ती विषयों के लिये अपने अभिकरण रख सकती है। केवल प्रांतीय विषयों के सम्बन्ध में समस्त प्रांतीय अभिकरण को यह काम सौंप दिया गया है। वहां आप अपने अधीनस्थ अधिकारियों का प्रयोग करते हैं, चाहे वे सीधे अधीन न हों। जब प्रांतीय अभिकरण का प्रयोग किया जाये तब भी हस्तक्षेप की शक्ति है ही। जहां तक फेडरल विषयों के क्रियान्वित करने का सम्बन्ध है उसे प्रांतीय अभिकरण के प्रयोग करने का अधिकार होगा।

जो व्यापक प्रश्न उठाया गया है उसके विषय में मैं बाद में कुछ कहना चाहता हूं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** अध्यक्ष महोदय, मैं उस संशोधन का विरोध करने खड़ा हुआ हूं जो मेरे मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने पेश किया है। मेरा मत यह है कि यह संशोधन केवल अविचारपूर्ण ही नहीं है जैसा कि मेरे मित्र श्री नज़ीरुद्दीन अहमद ने इसे बताया है, वह भयानक भी है। राष्ट्रपति की कार्यपालिका शक्ति उसके हाथों में होनी चाहिये और केवल उसी के हाथों में होनी चाहिये, उसे संविधान के अंतर्गत विशेष कृत्य करने होंगे; उसे विशेष शक्तियों का प्रयोग करना होगा। मेरे मित्र, श्री नज़ीरुद्दीन अहमद की इस बात से मैं सहमत नहीं हूं कि राष्ट्रपति केवल आभूषणात्मक प्रधान है। यदि वह ऐसा ही होता तो मुझे श्री टी.टी. कृष्णमाचारी के संधोधन को स्वीकार करने में कोई कठिनाई नहीं होती, किन्तु मैं तो संविधान का यह अर्थ समझता हूं कि राष्ट्रपति को बहुत महान शक्तियां प्राप्त हैं। अत: मेरा यह ख्याल है, श्रीमान, कि यह जोखम की बात है—मेरे विचार में केवल अविचारपूर्ण ही नहीं है—कि राष्ट्रपति को यह अधिकार दे दिया जाये कि वह अपनी शक्तियों को, जो उसे संविधान के अधीन प्राप्त हैं, कार्यपालिका पदाधिकारियों के हाथों में सौंप दे।

***पं. ठाकुर दास भार्गवः** अध्यक्ष महोदय, इस संशोधन के विषय में, मेरा समाधान नहीं हुआ है कि यह संशोधन आवश्यक है। वास्तव में जब हम अनुच्छेद 42 के अधीन राष्ट्रपति की शक्तियों के प्रयोग की तथा 'may be exercised by him' इन शब्दों के प्रयोग की बात करते हैं तो हम यह समझते हैं कि इन शक्तियों का प्रयोग राष्ट्रपति लगभग अव्यक्तिगत प्रणाली से करेगा। जहां तक संघ की कार्यपालिका शक्ति का सम्बन्ध है, उसका प्रयोग राष्ट्रपति या राज्यपाल या प्रधान मंत्री या कई अन्य अधिकारी करेंगे। यह बात नहीं है कि राष्ट्रपति उनका प्रयोग व्यक्तिगत तौर पर करेगा। कई नियम तथा विनियम हैं जिनसे कई अधिकारियों को संघ की कार्यपालिका शक्ति का प्रयोग करना पड़ता है। यदि ये शब्द रहेंगे तो यह तर्क उठ खड़ा होगा कि शक्तियों का प्रयोग या तो वह स्वयं करे या उसके अधीनस्थ अधिकारी ही करें। जब वे अधिकारी इन शक्तियों का प्रयोग करते हैं तो कई बार राष्ट्रपति को पता भी नहीं होता कि वे शक्तियां उसके नाम में प्रयुक्त हो रही हैं। अतः मेरा निवेदन है कि 'by him' इन शब्दों का अर्थ यह है कि या तो राष्ट्रपति उनका प्रयोग कर सकता है या उन शक्तियों को प्रदान कर सकता है।

दूसरा यह प्रश्न उठ सकता है कि उसके द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग वे ही लोग कर सकते हैं जिन्हें वे दी गई हैं, क्योंकि एक सिद्धान्त है कि प्रदत्त शक्तियों को आगे प्रदान नहीं किया जा सकता। इससे और भी बहुत-सी कठिनाइयां उत्पन्न हो जायेंगी यदि हम यह मान लें कि उसके द्वारा इन शक्तियों का प्रयोग या तो व्यक्तिगत है या उसके अधीनस्थ अधिकारियों के द्वारा है। अतएव मेरा निवेदन है कि जो शब्द रखे गये हैं वे बहुत काफी हैं और उनसे कोई अस्पष्टता उत्पन्न नहीं होती है। इसके अतिरिक्त, श्रीमान, मैं यह भी नहीं मानता कि 'shall' शब्द का प्रयोग आवश्यक है। विशेष प्रसंग में इस 'may' शब्द का अर्थ भी 'shall' ही होता है।

जहां तक श्री कामत द्वारा उठाये गये प्रश्न का सम्बन्ध है कि शक्तियों का प्रयोग संविधान और विधि के अनुसार होगा, 'may' शब्द का सम्बन्ध किसी प्रकार भी 'in accordance with the Constitution and the law' इन शब्दों से नहीं है। मेरा निवेदन है कि हम जो स्वीकार कर चुके हैं वे काफी हैं और उनसे सब आवश्यक योजन पूरे हो जाते हैं और कोई परिवर्तन करने की आवश्यकता नहीं है।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** श्रीमान, प्रश्न यह है कि यदि यह संशोधन किया जायेगा तो हानि होगी? यदि मैं उस दृष्टिकोण से उसे देखूं तो मेरे विचार में यह संशोधन केवल व्यर्थ ही नहीं, हानिकारक भी है। वास्तव में किसी ने अभी तक यह नहीं सोचा कि यह अनुच्छेद 42 अपूर्ण है। इसमें लिखा है कि संघ की कार्यपालिका शक्ति राष्ट्रपति में निहित होगी और वह उसका प्रयोग संविधान तथा विधि के अनुसार कर सकता है। अब संशोधन में लिखा है कि इस शक्ति का प्रयोग वह स्वयं करेगा या अपने अधीनस्थ अधिकारियों के द्वारा करेगा। क्या यह आवश्यक है? क्या संविधान और विधि में यह नहीं लिखा कि राष्ट्रपति को जो पदाधिकारी दिये जायेंगे उनका प्रयोग वह अपने प्रयोजन के लिये करेगा? वास्तव में खंड में लिखा है: "in accordance with the Constitution and law" क्योंकि

संविधान तथा विधि में उल्लिखित है कि राष्ट्रपति किस प्रकार अपनी शक्तियों का प्रयोग स्वयमेव या पदाधिकारियों के द्वारा करेगा, अत: मेरे विचार में ये शब्द नितान्त अनावश्यक हैं। मैं नहीं समझता कि कोई संशोधन आवश्यक है।

***माननीय श्री एन. गोपालस्वामी अयंगर** (मद्रास : जनरल): श्रीमान, मुझे उस आपत्ति को समझने में, जो इस संशोधन पर उठाई गई है, कुछ कठिनाई अनुभव होती है। अनुच्छेद 42 में लिखा है कि संघ की कार्यपालिका शक्ति राष्ट्रपति में निहित होगी। हमें सबको पता है कि राष्ट्रपति को बहुत-सी शक्तियां दी गई हैं किन्तु वास्तव में वह उनका प्रयोग नहीं करता। वह उनका प्रयोग केवल उनके आदेश पर करता है जो विधान-मंडल के प्रति उत्तरदायी होते हैं। यह पहली बात है जो, मैं चाहता हूं, सदन को समझ लेनी चाहिये।

दूसरी बात यह है कि संविधान में ही लिखा है कि कार्यपालिका कार्यवाही, जो वास्तव में कार्यपालिका शक्ति का प्रयोग ही है, वास्तव में राष्ट्रपति द्वारा सीधी नहीं की जा सकती। अनुच्छेद 64 (1) को देखिये, उसमें लिखा है:

" 'All executive action of the Government of India shall be expressed to be taken in the name of the President.'

[भारत-सरकार की समस्त कार्यपालिका कार्यवाही राष्ट्रपति के नाम से की हुई कही जायेगी।]"

अतएव वस्तुस्थिति से यह अपेक्षित है कि असंख्य मामलों में संविधान या विधि से राष्ट्रपति को शक्ति प्राप्त होती है, किन्तु उसका वास्तविक प्रयोग अन्य लोगों पर छोड़ दिया जाता है जो उसके प्रति उत्तरदायी समझे जाते हैं। निस्संदेह, वह इन अधिकारियों द्वारा की गई कार्यवाही का उत्तरदायित्व लेता है। कार्यरूप में प्रशासन के दृष्टिकोण से यह असम्भव है कि राष्ट्रपति उन सब शक्तियों का प्रयोग कर सके जो संविधान द्वारा उसमें निहित हैं। उदाहरण के लिये उन शक्तियों को ही लीजिये जो विधान के विषय में उसके कृत्यों के प्रयोग के सम्बन्ध में हैं। कई मामलों में, उदाहरण के लिये सभा को आहूत करने तथा उसका विघटन करने के विषय में वह कार्यवाही करता है किन्तु उन शक्तियों का प्रयोग वह अपने सांविधानिक परामर्शदाताओं की मंत्रणा पर करता है। और साधारणत: वह उन सब शक्तियों का प्रयोग नहीं कर सकता जो उसमें निहित हैं। इस पर क्या आपत्ति है कि वह अपने अधीनस्थ अधिकारियों से, जो उसके प्रति उत्तरदायी हैं, ऐसी शक्तियों के प्रयोग के लिये कह दे? क्योंकि उसके लिये उन आदेशों के जारी होने से पहले उन्हें देखना भी नितांत अनावश्यक है, अत: हमें उसे अधिकार देना चाहिये कि वह ऐसे अधिकारियों को चुन ले जिन पर उसे विश्वास है और जिन्हें इस शक्ति का प्रयोग करने का काम सौंपा जा सकता हो।

निस्संदेह मैंने इस आपत्ति पर विचार किया है; विधान-मंडल द्वारा पारित होने के पश्चात् विधेयकों पर अपनी अनुमति देने के विषय में वह क्या करेगा? साधारणत: हम राष्ट्रपति से आशा करते हैं कि वह अपनी अनुमति के प्रतीकस्वरूप, अपनी

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी अयंगर]

अनुमति अभिव्यक्त करने के लिये उन विधेयकों पर हस्ताक्षर करे। स्वभावतः ऐसे मामले में वह साधारणतः पदाधिकारियों से नहीं कहेगा कि वे उसकी ओर से हस्ताक्षर करें; किन्तु यदि यह मान लिया जाये कि ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न हो जायें जब कि वह उस प्रकार की अनुमति पर अपने हस्ताक्षर न कर सके, तो उसके लिये यह कहना भी आवश्यक हो सकता है कि उसके नाम में अनुमति पर कोई अन्य व्यक्ति हस्ताक्षर कर दे। मैं नहीं समझता कि इसमें कोई ऐसी बात है जो वैधानिक रूप में अनुचित हो, या सांविधानिक रूप में भी अनुचित हो, कि कोई अन्य व्यक्ति विधान-मण्डल द्वारा पारित विधेयक पर अनुमति सूचक हस्ताक्षर कर दे, जबकि राष्ट्रपति ऐसा करने में असमर्थ हो या वह समझता हो कि विशेष परिस्थितियों में अन्य लोग उसकी ओर से हस्ताक्षर कर सकते हैं। मेरे विचार में उन कठिनाइयों को दूर करने के लिये, जो वास्तव में पैदा होंगी, इन शब्दों को जोड़ना आवश्यक है।

***श्री एच.वी. कामतः** क्या मेरे मित्र श्री गोपालस्वामी अयंगर का प्रयोजन 'in accordance with the Constitution and the law' इन शब्दों से पूरा नहीं हो जाता? राष्ट्रपति अन्य व्यक्तियों को या अभिकर्ताओं को जो कुछ शक्ति प्रदान करेगा वह संविधान और विधि के अनुसार होगी।

***माननीय श्री एन. गोपालस्वामी अयंगरः** उस स्थिति में वह जब भी किसी अधिकारी को कोई प्राधिकार देना चाहेगा, हमें संसद से विधि बनवानी पड़ेगी। किन्तु यदि संसद उसके लिये प्राधिकार दे सकती है तो संविधान ही ऐसा क्यों न कर दे?

***श्री अलादि कृष्णस्वामी अय्यरः** श्रीमान, कुछ बातों को जो मैं कहना चाहता था पहले ही मेरे मित्र श्री गोपालस्वामी अयंगर ने कह दिया है। इसमें कोई नई बात नहीं है कि वर्तमान उपबन्ध को भारत शासन अधिनियम, 1935 की धारा 7 के अनुरूप बनाने का प्रयत्न किया जा रहा है। यद्यपि श्री नजीरुद्दीन अहमद ने अपनी साहित्यक बुद्धिमत्ता से मसौदा समिति को असावधान कह कर डांटा है, पर मैं उनका ध्यान उस भाषा की ओर आकृष्ट करना चाहता हूं जो संसदीय मसौदाकार ने भारत शासन अधिनियम की धारा 7 में प्रयोग की है। मैं धारा को पढ़ रहा हूं:

> "Subject to the provisions of this Act, the executive authority of the Federation shall be exercised on behalf of His Majesty by the Governor either directly or through officers subordinate to him....."

अतएव ऐसा स्पष्ट उपबन्ध रखने में, कि कार्यपालिका प्राधिकार का प्रयोग पदाधिकारियों के द्वारा भी किया जा सकता है, कोई नई या विचित्र बात नहीं है।

जहां तक साधारण कार्यपालिका शक्ति का सम्बन्ध है, वह राष्ट्रपति में निहित है। जहां तक कार्यपालिका प्रशासन को चलाने के उत्तरदायित्व का सम्बन्ध है वह मंत्रियों में निहित है। जहां तक शासकीय अभिकरणों से काम लेने का प्रश्न है,

वह संविधान के आधार में ही स्पष्टतः निहित है। मेरा ख्याल है कि संशोधन के बिना जो उपबन्ध है उसके अधीन भी राष्ट्रपति के लिये यह पूर्णतः सम्भव होगा कि वह कोई शासकीय अभिकरण नियुक्त कर दे, यद्यपि शासकीय अभिकरण के कार्यों का अन्तिम उत्तरदायित्व राष्ट्रपति पर होगा जो केबिनेट की मंत्रणा पर चलता है। वास्तव में, जब मूल अनुच्छेद की रचना की गई थी तो वह आयर के संविधान के अनुच्छेद 12 के आधार पर की गई थी। वह अनुच्छेद इस प्रकार है:

> "There shall be a President..... who shall exercise and perform the powers and functions conferred on the President by this Constitution and by law."

***श्री एच.वी. कामतः** यह युक्ति तो आपके विचारों के विपरीत है।

***श्री अलादि कृष्णस्वामी अय्यरः** विद्यमान संधोधन में कहा गया है कि राष्ट्रपति इस शक्ति का प्रयोग या तो स्वयं या अपने अधीनस्थ पदाधिकारियों के द्वारा कर सकता है।

***श्री एच.वी. कामतः** मेरे पास यहां आयर के संविधान की प्रति है। उसमें पदाधिकारियों का कहीं भी उल्लेख नहीं है।

***श्री अलादि कृष्णस्वामी अय्यरः** यदि केवल आप मेरी बात सुनने की कृपा करें तो आप यह आपत्ति नहीं उठाते। मैंने कहा था कि ऐसे स्पष्ट उपबन्ध के बिना भी राष्ट्रपति को क्षमता होगी कि कोई शासकीय अभिकरण बना दे या रख ले, और ऐसे भी संविधान हैं जिनमें इसका स्पष्ट उपबन्ध नहीं है, और मैंने आयर के संविधान के अनुच्छेद 12 का निर्देश दिया था, जिससे किसी हद तक श्री कामत के दृष्टिकोण का समर्थन होता है। कुछ ऐसे भी वकील हैं जो ऐसी अवस्था में भी विरोधी पक्ष का विरोध करते हैं जबकि विरोधी पक्ष उनकी बात पर उनके पक्ष में कोई बात स्वीकार कर ले। मेरे मित्र श्री कामत का यही रुख मालूम होता है। मैंने तो यही कहा था कि यह तो केवल रचना का प्रश्न है और उपबन्ध को स्पष्ट करने का प्रश्न है। संसदीय मसौदाकार ने भारत शासन अधिनियम की धारा 7 में पदाधिकारियों को स्पष्ट निर्देश किया था। आयर के संविधान में पदाधिकारियों का कोई निर्देश नहीं है। पदाधिकारियों का कोई निर्देश न करने पर भी, राष्ट्रपति को पूर्ण क्षमता होगी कि वह कार्यपालिका के कृत्यों को पूरा करने के लिये शासकीय अभिकरणों का प्रयोग करे, यद्यपि अंततोगत्वा कार्यपालिका में निहित कृत्यों के निर्वहन के विषय में उत्तरदायित्व राष्ट्रपति तथा कार्यपालिका पर ही आयेगा, चाहे किसी विधि के अंतर्गत हो या कार्यपालिका के कृत्यों सम्बन्धी संविधान के साधारण सिद्धांतों के अंतर्गत हो।

अतएव मेरा निवेदन है कि श्रीमान, जो बात निहित है उसे स्पष्ट करने में कोई हानि नहीं है। वहां 'पदाधिकारी' शब्द का प्रयोग किया गया है। 1935 के भारत शासन अधिनियम के सम्बन्ध में आपको चाहे कोई भी आपत्ति हो, साधारणतः इस भाषा को यहां रखने में कोई आपत्ति नहीं हो सकती। मैं तो और भी आगे बढ़कर यह बल देना चाहता हूं कि सांविधानिक दृष्टि से ऐसे उपबन्ध की

[श्री अलादि कृष्णस्वामी अय्यर]

आवश्यकता है। राष्ट्रपति अपने कृत्यों को कितनी हद तक प्रदान कर सकता है इस प्रश्न पर अमरीका में वाद-विवाद हो चुका है। उदाहरण के लिये, यदि राष्ट्रपति में कोई शक्ति निहित हो तो ये प्रश्न उठ सकते हैं कि क्या यह सम्भव है कि वह अपने प्राधिकार को प्रदान कर सकता है या फिर प्रत्येक मामले में वह प्रश्न राष्ट्रपति के समक्ष पेश होना चाहिये। हमें बताया गया है कि वास्तव में राष्ट्रपति से लगभग 2,000 हस्ताक्षर प्रतिदिन करवाने पड़ेंगे तभी प्रधानात्मक पद्धति चल सकती है। अभी हाल ही में अमरीकी संविधान के विषय में प्रकाशित एक पुस्तक में बताया गया है कि राष्ट्रपति के हस्ताक्षरों की बहुत से विधेयकों पर आवश्यकता होती है, जिनके विषय में उसे कुछ भी पता नहीं होता।

अतः हमें इन दो प्रश्नों को अलग-अलग करना पड़ेगा: अंतिम उत्तरदायित्व का प्रश्न और उस अभिकरण विशेष का प्रश्न जो किसी सरकारी संस्था या किसी ढांचे के काम करने में नियोजित किया जा सकता है। अतः किसी विधि में यह उपबंध किया जा सकता है कि एक अभिकरण विशेष आदेशों को क्रियान्वित करेगा। वहां भी उसका यह अर्थ नहीं है कि देश की सरकार पर उस विधिरूप अभिकरण के समुचित रूप से काम करने का उत्तरदायित्व नहीं है। चाहे वह विधिरूप अभिकरण हो या प्रशासकीय अभिकरण हो। इन सब मामलों में कार्यपालिका को कोई विशेष शासकीय अभिकरण नियोजित करने की मनाही नहीं है; 'पदाधिकारी' शब्द रख कर हमने उन सब परिकल्पनाओं को समाप्त कर दिया है जो अमरीकी संविधान में शक्ति-प्रदान करने के विषय में चल रही थीं।

यह संभव है कि यह ध्यान रखते हुए कि हमारी व्यवस्था मुख्यतः ब्रिटिश विचारों पर आधारित है, ऐसे उपबन्ध के बिना भी, शासकीय अभिकरण का नियोजन किया जा सकता है। अन्य अधिराज्य-संविधानों में इस आशय का एक साधारण उपबन्ध है कि शक्ति रानी में निहित है। आस्ट्रेलिया और कनाडा के संविधानों में भी ऐसा ही है। यह तो केवल भाषा विशेष का प्रयोग है और मुझे उस पर कोई आपत्ति दिखाई नहीं देती। सामान्य व्यक्ति को अमरीकी विधि या संविधान या अधिराज्यों के संविधानों के उपबन्धों के प्रश्न पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है। इस देश में सामान्य जन को स्पष्ट बताने के लिये कि शासकीय अभिकरण का प्रयोग किया जा सकता है, यह उपबंध अच्छा है।

***श्री एच.वी. कामतः** एक बात स्पष्ट करना चाहता हूं, श्रीमान, कि क्या मैं अपने मित्र श्री अलादि कृष्णस्वामी से पूछ सकता हूं कि क्या संसार के किसी अन्य संविधान में राज्य के कार्यपालिका प्रधान के अधीनस्थ अधिकारियों को इस प्रसंग में निर्देश किया गया है।

***अध्यक्षः** उन्होंने भारत शासन अधिनियम से एक धारा पढ़ कर सुनाई थी।

***श्री एच.वी. कामतः** भारत शासन अधिनियम किसी स्वतंत्र राज्य का संविधान नहीं है।

***श्री अलादि कृष्णस्वामी अय्यरः** इस प्रश्न का स्वतंत्रता से कोई सम्बन्ध नहीं है।

***श्री एच.वी. कामतः** यह मूर्खतापूर्ण उपबन्ध है।

***अध्यक्षः** मैं इस पर मत लूंगा। श्री कामत का संशोधन वास्तव में इसका निराकरण ही है।

***श्री एच.वी. कामतः** नहीं श्रीमान्।

***श्री एच.वी. कामतः** बहुत अच्छा, पहले मैं आपके संशोधन पर मत लूंगा। प्रश्न यह है:

"कि संशोधन सं. 418 में, अनुच्छेद 42 के प्रस्थापित खंड (1) में, 'either directly or through officers subordinate to him' ये शब्द हटा दिये जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** फिर, मैं श्री कृष्णमाचारी द्वारा प्रस्तावित प्रस्थापना पर मतदान लूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 42 के खंड (1) में, 'may be exercised by him' इन शब्दों के स्थान पर 'shall be exercised by him directly or through officers subordinate to him' ये शब्द रख दिये जायें।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** मेरे विचार में एक बज चुका है और हम अब स्थगित हो जायेंगे। मैं सदस्यों को बताना चाहता हूं कि हम अन्य अनुच्छेदों को, जिनकी सूचना आज की कार्यावली में दी गई है, आज मध्याह्नन्तर के साढ़े चार बजे लेंगे।

***पं. हृदय नाथ कुंजरूः** हम जब आज सत्र करने के लिए राजी हुए थे तो मेरे विचार में यही समझा गया था कि सत्र केवल प्रातःकाल ही होगा। मैं नहीं समझता कि कोई मध्याह्नान्तर सत्र के लिये तैयार था। अतएव मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि दूसरा सत्र कल प्रातःकाल कर लें। आज मध्याह्नन्तर में हमें कुछ काम है जो हमने इसलिये ले लिए थे कि सामान्यतः सभा मध्याह्नन्तरों में समवेत् नहीं होती।

***अध्यक्षः** कुछ भी हो, मैं यह नहीं समझा था कि हम आज दोपहर बाद नहीं बैठेंगे। यह अनिश्चित रहने दिया गया था और हमें अब निश्चय करना है कि हम दोपहर बाद बैठेंगे या नहीं। यह देखते हुए कि कई सदस्य द्वितीय पठन को समाप्त करना चाहते हैं और उनमें से कई दीपावली के कारण चले जाना चाहते हैं, मेरे विचार में हमें आज दोपहर बाद बैठना चाहिये। यदि हम आज दोपहर बाद नहीं बैठेंगे तो संभव है कि हम कल भी समाप्त न कर सकें।

***माननीय श्री एन. गोपालस्वामी अयंगरः** वास्तव में, श्रीमान, हमने और कई अन्य सदस्यों ने भी आज सायंकाल 5 बजे सरकारी भवन में भोज के लिये निमंत्रण स्वीकार कर लिये हैं। यदि हम 4.30 बजे आरंभ करेंगे तो मेरे विचार में हम कुछ कार्य नहीं कर सकेंगे।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** उस स्थिति में हम चार बजे समवेत् हो सकते हैं।

***अध्यक्षः** सदन का अपने सदस्यों पर पहला दावा है। अतएव में आज सायंकाल के साढ़े चार बजे का समय निश्चित करता हूं। सदन सायंकाल के साढ़े चार बजे तक के लिये स्थगित रहेगा।

तत्पश्चात् सभा साढ़े चार बजे तक के लिये मध्याह्न भोजनार्थ स्थगित हुई।

सभा मध्याह्न भोजन के पश्चात् साढ़े चार बजे अध्यक्ष महोदय (माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में पुनः समवेत हुई।

अनुच्छेद 280क

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** श्रीमान, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 280 के पश्चात्, निम्न नया अनुच्छेद प्रविष्ट कर दिया जाये:–

'280A (1) If the President is satisfied that a situation has arisen whereby the financial stability or credit of India or of any part of the territory thereof is threatened, he may be a proclamation make declaration to that effect.

Provisions as to financial emergency

(2) The provisions of clause (2) of article 275 of this Constitution shall apply in relation to a proclamation issued under clause (1) of this article as they apply in relation to a proclamation of Emergency issued under clause (1) of the said article 275.

(3) During the period any such proclamation as is mentioned in clause (1) of this article is in operation, the executive authority of the Union shall extend to the giving of directions to any State to observe such canons of financial propriety as may be specified in the directions, and to the giving of such other directions as the President may deem necessary and adequate for the purpose.

(4) Notwithstanding anything contained in this Constitution—

(a) any such direction may include—

(i) a provision requiring the reduction of salaries and allowances of all or any class of persons serving in connection with the affairs of a State;

(ii) a provision requiring all Money Bills to which the provisions of article 182 of this Constitution apply to be reserved for the consideration of the President after they are passed by the Legislature of the State;

(b) it shall be competent for the President during the period any proclamation issued under clause (1) of this article is in operation to issue directions for the reduction of salaries and allowances of all or any class of persons serving in connection with the affairs of the Union including the judges of the Supreme Court and the High Courts.

(5) Any failure to comply with any directions given under clause (3) of this article shall be deemed to be a failure to carry on the Government of the State in accordance with the provisions of this Constitution.'

[280क (1) यदि राष्ट्रपति का समाधान हो जाये कि ऐसी स्थिति पैदा हो गई है जिससे भारत अथवा उसके राज्य-क्षेत्र के किसी भाग का वित्तीय स्थायित्व या प्रत्यय संकट में हो तो वह उद्घोषणा द्वारा उस बात की घोषणा कर सकेगा। वित्तीय आपात के बारे में उपबन्ध

(2) अनुच्छेद 275 के खंड (2) के उपबन्ध इस अनुच्छेद के अधीन निकाली गई उद्घोषणा के सम्बन्ध में वैसे ही लागू होंगे जैसे कि वे अनुच्छेद 275 के अधीन निकाली गई आपात की उद्घोषणा के लिये लागू होते हैं।

(3) उस कालावधि में जिसमें कि खंड (1) में वर्णित कोई उद्घोषणा प्रवर्तन में रहती है संघ की कार्यपालिका शक्ति किसी राज्य को वित्तीय औचित्य सम्बन्धी ऐसे सिद्धान्तों का पालन करने के लिये निदेश देने तक जैसे कि निदेशों में उल्लिखित हों तथा ऐसे अन्य निदेश देने तक, जिन्हें राष्ट्रपति उस प्रयोजन के लिये देना आवश्यक और समुचित समझे, विस्तृत होगी।

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

(4) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी–

(क) ऐसे किसी निदेश के अन्तर्गत–

(1) राज्य के कार्यों के सम्बन्ध में सेवा करने वाले व्यक्तियों के सब या किन्हीं वर्गों के वेतनों और भत्तों में कमी की अपेक्षा करने वाले उपबन्ध,

(2) धन-विधेयकों अथवा अन्य विधेयकों को, जिनको अनुच्छेद 182 के उपबन्ध लागू हैं, राज्य के विधान-मंडल के द्वारा उनके पारित किये जाने के पश्चात् राष्ट्रपति के विचार के लिये रक्षित रहने के लिये उपबन्ध, भी हो सकेंगे,

(ख) उस कालावधि में, जिसमें कि इस अनुच्छेद के अधीन निकाली गई उद्घोषणा प्रवर्तन में हैं, उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के सहित, संघ के कार्यों के सम्बन्ध में सेवा करने वाले व्यक्तियों के सब या किसी वर्ग के वेतनों और भत्तों में कमी के लिये निदेश निकालने के लिये राष्ट्रपति सक्षम होगा।

(5) इस अनुच्छेद के खंड (3) के अधीन दिये गये निदेशों का पालन करने में असफलता को भी इस संविधान के उपबंधों के अनुसार राज्य का शासन चलाने की असफलता समझा जायेगा।)"

श्रीमान, इस देश की वर्तमान आर्थिक तथा वित्तीय स्थिति को देखते हुए इस सभा में मुशकिल से ही कोई ऐसा सदस्य होगा जो ऐसे उपबन्ध की आवश्यकता पर आपत्ति करे जो इस नये अनुच्छेद 280क में रखा गया है और इसलिये इस अनुच्छेद को हमारे संविधान के मसौदे में रखने का औचित्य बताने पर मैं अधिक समय खर्च करना नहीं चाहता। मैं तो केवल यही कहना चाहता हूं कि यह अनुच्छेद लगभग उसी अधिनियम के आधार पर बनाया गया है जो संयुक्त राज्य अमरीका में 1930 में या उस समय के लगभग पारित हुआ था और जिसे राष्ट्रीय रिकवरी अधिनियम कहते हैं जिससे राष्ट्रपति को आर्थिक तथा वित्तीय दोनों प्रकार की कठिनाइयों को दूर करने के लिये ऐसे ही उपबंध बनाने की शक्ति दी गई थी, जब कि महान आर्थिक संकट के कारण अमरीकी लोगों पर वे कठिनाइयां आ पड़ीं थीं। उदाहरण के लिये, हमने संविधान में ऐसा उपबंध रखना आवश्यक क्यों समझा इसका कारण यह है कि हमें पता है कि अमरीका संविधान के अधीन उस विधान को जो पारित किया गया, थोड़े समय बाद ही उच्चतम न्यायालय में चुनौती दी गई और उच्चतम न्यायालय ने समूचे विधान को असंविधानिक घोषित कर दिया जिसका परिणाम यह है उच्चतम न्यायालय की घोषणा के पश्चात्, राष्ट्रपति वह काम नहीं कर सकता जो वह राष्ट्रीय रिकवरी अधिनियम के उपबंधों के अधीन करना चाहता था। यदि हमारे राष्ट्रपति को ऐसे ही वित्तीय तथा आर्थिक आपात

का सामना करना पड़ जाये तो शायद ऐसी ही कठिनाई उसके सामने भी आ सकती है। उस कठिनाई को रोकने के ही लिये हमने सोचा कि संविधान में ही स्पष्ट उपबंध रख देना अधिक अच्छा होगा और यही कारण है कि यह अनुच्छेद पेश किया गया है।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** श्रीमान, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:—

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क के खंड (1) में, 'has arisen' इन शब्दों के स्थान पर 'is imminent' ये शब्द रख दिये जायें।"

यदि मेरे संशोधन को स्वीकार कर लिया जाये तो अनुच्छेद इस प्रकार बन जायेगा:

"If the President is satisfied that a situation is imminent whereby the financial stability or credit of India or of any part of the territory thereof is threatened, he may by a proclamation make a declaration to that effect."

इस संशोधन के लिये मेरी युक्ति यह है कि स्थिति उत्पन्न हो जाने के पश्चात् तो बहुत गड़बड़ हो सकती है और शायद लोगों को देश के प्रत्यय में भरोसा ही न रहे। अनुच्छेद में लिखा है कि यदि स्थिति पैदा हो गई है और अराजकता फैल चुकी है, तो लोगों को राज्य के प्रत्यय में भरोसा ही न रहेगा। मैं चाहता हूं कि 'has arisen' [पैदा हो गई है] इन शब्दों के स्थान पर 'is imminent' [पैदा होने वाली है] ये शब्द रख दिये जायें।

मेरा दूसरा संशोधन सं. 441 है जो इस प्रकार है:—

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क के खंड (3) में, 'operation' शब्द के पश्चात् 'Parliament shall have power to make laws in respect of subjects contained in the State List as if they were subjects in the Concurrent List and" ये शब्द प्रविष्ट कर दिये जायें।"

यदि मेरा संशोधन स्वीकार कर लिया जाये तो अनुच्छेद इस प्रकार बन जायेगा:—

'During the period any such proclamation as is mentioned in clause (1) of this article is in operation Parliament shall have power to make laws in respect of subjects contained in the State List as if they were subjects in the Concurrent List, and the executive authority of the Union shall extend to the giving of directions to any State to observe such canons of financial propriety as may be

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

specified in the directions, and to the giving of such other directions as the President may deem necessary and adequate for the purpose."

श्रीमान, मेरे इन संशोधनों का उद्देश्य केवल यही है कि अनुच्छेद में जो दो त्रुटियां हैं उन्हें दूर किया जाये। यद्यपि यह अनुच्छेद असाधारण है और इसमें वित्तीय आपात का उपबन्ध है, हमारे देश की वर्तमान स्थिति में, मेरे विचार में यह शक्ति कार्यपालिका के हाथ में होनी चाहिये। मैंने केवल इसकी तुलना अनुच्छेद 275 से करने का प्रयत्न किया है। मैं तो यह चाहता था: कि सर्वप्रथम, खंड (1) में 'has arisen' इन शब्दों के स्थान पर 'is imminent' ये शब्द रख देने चाहिये जिससे कि हम स्थिति गम्भीर होने से पूर्व ही उपाय कर सकें। अतएव ज्यों ही वित्तीय आपात पैदा होने वाला हो, हम आवश्यक उपाय कर सकते हैं, यदि 'has arisen' के स्थान पर 'is imminent' ये शब्द रख दिये जायें।

फिर राष्ट्रपति को शक्ति होनी चाहिये कि वह सब राज्य-विषयों को समवर्ती सूची के विषय मान कर उनके संबंध में विधान बना सके। यह सर्वथा संभव है कि राज्य को अपने किसी विधान से बाध्य होकर, अपनी ही विधियों से बाध्य होकर किसी विशेष प्रकार से कार्य करना पड़े और उन्हें राष्ट्रपति के निर्देशों का पालन करने का वैधानिक प्राधिकार प्राप्त न हो। मैं यह चाहता हूं कि संसद को राज्यों की उन विधियों में परिवर्तन करने की शक्ति होनी चाहिये और इसलिये मैं चाहता हूं कि उस कालावधि में संसद को सूची 2 के विषयों पर विधियां बनाने की शक्ति होगी, मानो कि वे विषय समवर्ती सूची में थे, ताकि आपात का सामना करने के लिये आवश्यक वित्तीय उपाय किये जा सकें। मेरे विचार में, यदि यह नहीं किया जायेगा तो केवल एक आदेश मात्र से राष्ट्रपति को क्षमता नहीं हो जायेगी कि वह आदेश पारित कर सके या उनका पालन करवा सके क्योंकि संभवत: वे राज्यों की विधियों के अनुकूल न हों और राष्ट्रपति के लिये उन विधियों को बदलना संभव न हो। इसके अतिरिक्त शायद वे प्रांत भी उन पर सहमत न हों। अत: मैं तो यही चाहता हूं कि संसद को ये शक्ति मिल जानी चाहिये कि उन मामलों में संसद विधि बना सकती है।

मेरे विचार में श्रीमान, यह संशोधन आवश्यक है। हम यह शक्ति चाहते हैं। क्या मैं यह भी कह सकता हूं कि इस अनुच्छेद से विधान मंडलों की भी कोई शक्तियां नहीं छिनतीं और मेरे विचार में राज्य के हितों के लिये यह आवश्यक है, विशेषत: जब हम वित्तीय कठिनाई में हों।

***श्री एच.वी. कामत:** श्रीमान, क्या मैं संशोधन सं. 438 में एक मौखिक परिवर्तन करने के लिये आपकी अनुमति मांग सकता हूं? मैं 'chaos' के स्थान पर 'breakdown' शब्द का प्रयोग करना चाहता हूं।

***अध्यक्ष:** हां। (*बाधा*)।

***श्री एच.वी. कामत:** मुझे 'chaos' के स्थान पर 'breakdown' शब्द रखने के लिये अध्यक्ष महोदय की अनुमति मिल गई है। श्रीमान, मैं सूची सं. 19 के संशोधन सं. 438, 442 और 444 को पेश करता हूं। संशोधन सं. 438 यह है:

"कि प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क के खंड (1) में, 'whereby the financial stability or credit of India or of any part of the territory thereof is threatened' इन शब्दों के स्थान पर 'which threatens India or any part thereof with financial breakdown or economic disaster' ये शब्द रख दिये जायें।"

संशोधन सं. 442 यह है:

"कि उसी सूची के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क का खंड (4) हटा दिया जाये।"

संशोधन सं. 444 यह है:

"कि उसी सूची के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क का खंड (5) हटा दिया जाये।"

इस नये अनुच्छेद 280क से संघ के राष्ट्रपति को काफी आपात-शक्तियां दी गई हैं, जो उन शक्तियों से अधिक हैं जो उसे संविधान के द्वारा अनुच्छेद 275, 276 तथा 280 तक के अनुच्छेदों से प्राप्त हुई है। इस अनुच्छेद में ऐसी आकस्मिकता या स्थिति की कल्पना की गई है जहां भारत का या उसके किसी भाग का वित्तीय स्थायित्व या प्रत्यय खतरे में हो। मैं अनुभव करता हूं कि यह आकस्मिकता या भारत के अथवा उसके किसी भाग के वित्तीय स्थायित्व या प्रत्यय को खतरा आपात की उद्घोषणा के लिये पर्याप्त आधार नहीं माना जाना चाहिये। आपात की घोषणा का औचित्य तो तभी हो सकता है जब कि अधिक गम्भीर परिस्थितियां हों, अर्थात् जब वित्तीय गतिरोध का या आर्थिक व्यवस्था के ठप्प होने का खतरा हो। यह तो बहुत ज्यादती है कि राष्ट्रपति को भारत के या उसके किसी प्रांत या राज्य के वित्तीय स्थायित्व को खतरा होने की स्थिति में ऐसी विस्तृत शक्तियां दे दी जायें।

आज प्रात:काल, आपने ठीक ही कहा था, श्रीमान, कि कई प्रांतों ने आय कर की आय के गलत वितरण के विषय में शिकायत की है या कर रहे हैं, और कि उनके राजस्वों का आज सवेरे नया अपहरण किया गया था, जब कि इस सदन ने विक्रय-कर का अनुच्छेद स्वीकार किया था, कुछ माननीय सदस्यों का यही ख्याल था। मद्रास जैसे कुछ प्रांतों में, और अंशत: मध्य प्रदेश में भी, मद्य-निषेध आरंभ कर दिया गया है। उससे प्रांतों के राजस्वों में कमी हो गई है, और उन्हें मद्य-निषेध के लिये कर्मिवृंद आदि रख कर अतिरिक्त खर्च भी करना पड़ा है।

[श्री एच.वी. कामत]

मान लीजिये इन परिस्थितियों में भविष्य में स्थिति खराब हो जाती है। विश्व की आर्थिक स्थिति खराब हो सकती है, बिगड़ सकती है। हम यथासंभव प्रयत्न करेंगे कि हमारी आर्थिक स्थिति सुधरे किन्तु संसार भर में अवमूल्यन हुए हैं तथा हमारे अपने रुपये का भी अवमूल्यन हो चुका है, अत: कोई भी ज्योतिषी बन कर नहीं कह सकता कि निकट भविष्य में हमारी स्थिति सुधर जायेगी। मान लीजिये कि बुरी से बुरी बात हो जाती है, आर्थिक स्थिति और भी बिगड़ जाती है, और प्रांत, मद्यनिषेध के कारण आय कम हो जाने से और अन्य अतिरिक्त कारणों से, अपनी रचनात्मक योजनाओं को क्रियान्वित नहीं कर सकते हैं, और मान लीजिये कि वे अपना खर्च भी नहीं चला पाते, और उनके आय-व्ययक घाटे में चलते हैं, कल्पना कीजिये, यह असंभावित नहीं है—घाटे के आय-व्ययकों की शृंखला—अधिक घाटा न सही—प्रतिवर्ष थोड़ा ही घाटा सही—राष्ट्रपति ऐसी स्थिति का मतलब यह लगा सकता है कि प्रांत या राज्य विशेष का वित्तीय स्थायित्व या प्रत्यय खतरे में है। क्या मैं पूछ सकता हूं कि क्या राष्ट्रपति के लिये यह पर्याप्त आधार होगा कि वह सब शक्तियां अपने हाथ में ले लें, जो वह आपात की उद्घोषणा करते ही ले सकता है? मैं कहता हूं, श्रीमान, कि यदि हम वास्तव में प्रांतीय स्वायत्तता की योजना को क्रियान्वित करना चाहते हैं तो हमारे एककों के साथ यह व्यवहार नहीं करना चाहिये। निस्संदेह आप ध्यान रखिये कि वित्तीय रूप में, या आर्थिक रूप में हमारी अच्छी स्थिति रहे। किन्तु प्रशासन अपनी योजनाओं को सफल नहीं बना सकते, और नफे के आय-व्ययक तैयार नहीं कर सकते, इन छोटे-छोटे बहानों को लेकर आपात की उद्घोषणा कर देना और उसके फलस्वरूप सब शक्तियों को अपने हाथ में ले लेना राष्ट्रपति के लिये बुद्धिमानी नहीं होगी—मैं अधिक कठोर भाषा का प्रयोग नहीं करूंगा।

मैं मानता हूं, मैं स्पष्टत: स्वीकार करता हूं कि यह उपाय उस समय अपनाना चाहिये जब वित्तीय व्यवस्था ठप्प ही हो जाये—निस्संदेह वह अधिक खराब स्थिति है, वह आर्थिक अस्थायित्व से कहीं अधिक भयानक स्थिति है। आर्थिक स्थायित्व का अर्थ कोई कुछ भी नहीं समझ सकता या कुछ भी समझ सकता है। यदि वित्त-व्यवस्था के ठप्प हो जाने की या आर्थिक सत्यानाश की आशंका हो, तो निस्संदेह मैं मान सकता हूं कि राष्ट्रपति को कुछ आपात-शक्तियां दे दी जायें, किन्तु अन्यथा नहीं; किसी प्रांत के आर्थिक स्थायित्व या वित्तीय स्थायित्व के संकट में होने मात्र से ऐसा नहीं होना चाहिये। सदन से मेरा निवेदन है कि यदि व्यवस्था के ठप्प हो जाने का या सत्यानाश का ही खतरा हो तब ही राष्ट्रपति को आपातिक शक्तियां देनी चाहियें।

मुझे भय है, कि आज सदन में उपस्थिति कम है अत: संभव है कि हम इस अनुच्छेद को पूरी तरह विचार किये बिना तथा ध्यान दिये बिना ही पारित कर देंगे। यह दुर्भाग्य की बात है कि दीपावली इतनी निकट है। माननीय सदस्य दीवाली पर अपने घरों को प्रकाशित करने के लिये अधिक आतुर हैं, जितने कि वे उस अंधकार को प्रकाशित करने के लिये नहीं हैं जो अंतिम दिनों में इस सदन में छा गया प्रतीत होता है। मुझे आशा है कि उपस्थिति कम होने के बावजूद भी जो सदस्य यहां उपस्थित हैं वे इस मामले पर ध्यानपूर्वक विचार करेंगे कि क्या

राष्ट्रपति को ऐसी शक्तियां प्रदान करना आवश्यक है जब कि वित्तीय स्थायित्व या प्रत्यय केवल संकट में हो।

अब मैं संशोधन 442 और 444 को लेता हूं जिसका उद्देश्य खंड 4(क) को हटाना है—यह 4 (क) होना चाहिये; यहां अशुद्ध छप गया है; मैंने संशोधन सं. 442 भेजा था जिसमें प्रस्थापित नये खण्ड के खंड 4(क) का निर्देश था, समूचे खंड (4) का नहीं—और प्रस्थापित नये अनुच्छेद के खंड 5 का निर्देश था। सदन देखेगा कि राष्ट्रपति को आपात की उद्घोषणा होने पर, इन परिस्थितियों में, काफी शक्तियां मिल जाती हैं। खंड (3) के अंतिम भाग में लिखा है कि "and to the giving of such other directions as the President may deem necessary and adequate for the purpose." इस उपबंध से उसे शक्ति मिल जाती है कि वह जो चाहे कर सकता है जब तक कि वह आदेश पर यह लिखता रहे "मेरा समाधान हो गया है कि यह इस प्रयोजन के लिये आवश्यक और समुचित है।" वह जो चाहे कर सकता है और कोई भी न्यायालय में या संसार में अन्यत्र कहीं भी जाकर उसके अधिनियमों या आज्ञप्तियों या अध्यादेशों पर आपत्ति नहीं कर सकता। इस बात को देखते हुए मेरा व्यक्तिगत अनुभव यह है कि इस अनुच्छेद में खंड 4(क) को रखने की कोई आवश्यकता ही नहीं है, क्योंकि खंड 4(क) में वेतनों और भत्तों की कमी का विषय है तथा धन-विधेयकों के विषय में कुछ उपबन्ध हैं जो कि ऐसे मामले हैं जो खंड (3) के दूसरे भाग में समाविष्ट उपबंध के क्षेत्र में आ सकते हैं अतः इसे आसानी से हटाया जा सकता है और इससे खंड (क) के आशय में कोई फर्क नहीं जायेगा तथा उनमें से कोई भी शक्तियां कम नहीं होंगी जो इस खंड द्वारा राष्ट्रपति को वित्तीय आपात में मिलती हैं।

खंड (5) तो केवल आनुषंगिक उपबंध है। इसे यहां क्यों रखा गया है, मैं नहीं समझ पाता; मुझे इस खंड के लिये कोई कारण नहीं दिखाई देता। यदि सदन अनुच्छेद 277क तथा 278 को देखेगा जो इस सदन ने कुछ मास पूर्व स्वीकार किया था, तो मेरे माननीय साथी देखेंगे कि इस आकस्मिकता की, कि राज्य का शासन इस संविधान के उपबंधों के अनुसार नहीं चलाया जा सकता, स्पष्टतः अनुच्छेद 277 क तथा 278 में कल्पना कर ली गई थी। अब, श्रीमान, राज्य के राज्यपाल को यह निश्चय करना होगा कि राज्य का शासन इस संविधान के उपबंधों के अनुसार चलाया जा सकता है या नहीं, और राज्यपाल को प्रतिवेदन देना होगा। 278 के पहले खंड में लिखा है:—

> " 'If the President, on receipt of a proclamation issued by the Governor of a State under article 188 of this Constitution, is satisfied that a situation has arisen in which the government of the State cannot be carried on in accordance with the provisions of this Constitution, he may by proclamation etc. etc.'
>
> [यदि इस संविधान के अनुच्छेद 188 के अन्तर्गत राज्य के राज्यपाल द्वारा की गई उद्घोषणा के प्राप्त होने पर राष्ट्रपति का समाधान हो जाये कि ऐसी स्थिति पैदा हो गई है जिसमें कि उस राज्य का शासन इस संविधान के उपबंधों के अनुसार नहीं चलाया जा सकता, तो वह उद्घोषणा द्वारा..... आदि]"

[श्री एच.वी. कामत]

यह बहुत स्पष्ट है। इस नये अनुच्छेद 280क के अधीन राष्ट्रपति द्वारा निर्देश जारी करने के पश्चात् जब कि उसे भारत में या उसके किसी भाग में वित्तीय आपात का ख्याल हो, तब इस खंड (5) की क्या अपेक्षा है? राज्यपाल घटनास्थल पर है ही और यदि वह ईमानदार तथा सावधान राज्यपाल है तो वह राष्ट्रपति को समय-समय पर सूचना दे सकता है, देगा ही, वह सूचना देने के लिये बाध्य है कि इन निदेशों को कैसे कार्यान्वित किया जा रहा है। हम यहां पूर्णतया अनावश्यक शब्दजाल को रख रहे हैं उससे क्या लाभ है—मैं अधिक कठोर शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहता? हमने कई अनुच्छेद स्वीकार किये हैं जहां हमने आपात की शक्तियों का उपबंध किया है, और यदि राज्यपाल अनुभव करता है या उसका समाधान हो जाता है कि राज्य का शासन संविधान के अनुसार नहीं चलाया जा सकता तो वह राष्ट्रपति को प्रतिवेदन दे देगा। हम यह क्यों कहें 'निदेशों का पालन करने में असफलता आदि'? इसका निर्णय कौन करेगा? खंड (5) में निर्देशित मामला मुख्यतः यही है। इसका निर्णय कौन करेगा–राष्ट्रपति या राज्यपाल या कोई अन्य प्राधिकारी? इसे स्पष्ट करिये, इसे अस्पष्ट मत छोड़िये। यदि राष्ट्रपति का समाधान हो जाये कि यह असफलता है, तो इसे स्पष्ट कीजिये कि यदि राष्ट्रपति का समाधान हो जाये कि यह असफलता है, तो इसका अर्थ यह है कि राज्य सरकार असफल रही है। अन्यथा यह कहिये कि राज्य का राज्यपाल असफलता या अन्यथा स्थिति के विषय में राष्ट्रपति को प्रतिवेदन देगा।

किन्तु खंड (5) सर्वप्रथम तो अनावश्यक, व्यर्थ है और दूसरी बात, यह अत्यन्त अस्पष्ट है। यह कहीं भी परिभाषित नहीं किया गया है कि कौन प्राधिकारी या व्यक्ति यह निश्चय करेगा कि असफलता हुई है या नहीं और इसे इतना अस्पष्ट छोड़ना भयानक है। इसे इतना स्पष्ट कीजिये कि संदेह का नाम भी न रहे कि राष्ट्रपति ही यह निर्णय करेगा कि असफलता हुई है या नहीं। यदि इसे अस्पष्ट रहने दिया जायेगा तो इससे हमारी ही बुद्धिमानी पर आक्षेप होगा। मुझे आशा है कि डॉक्टर अम्बेडकर की विद्वत्ता, सद्भावना तथा विवेकशीलता से इतनी पूरी तरह भिन्न नहीं है कि वे मेरी बात के औचित्य को न समझ सकें। मैं मानता हूं कि वे विद्धान हैं, किन्तु मुझे आशा है कि उनकी विद्वत्ता मानवीय विवेकशीलता के अन्य अंगों से पूरी तरह भिन्न नहीं है; और मैं आशा करता हूं कि वे मेरे प्रस्तावित संशोधनों पर काफी ध्यान देंगे। मैं उन्हें सदन के विचार के लिये अपने पूरे दिल से पेश करता हूं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** अध्यक्ष महोदय, मैं संशोधन सं. 439, 440 तथा 443 को पेश करता हूं। वे ये हैं:

> "कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क के खंड (1) में, 'threatened' शब्द के पश्चात् 'or is likely to be threatened' ये शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280 के खंड (2) के स्थान पर, निम्न रख दिया जाये:—

'(2) The proclamation issued under clause (1) of this article shall continue till such time it is revoked by the President.

[इस अनुच्छेद के खंड (1) के अधीन की गई उद्घोषणा उस समय तक जारी रहेगी जब तक कि राष्ट्रपति उसे समाप्त न कर दें।]"

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क के खंड (4) के उप-खंड (क) की कंडिका (2) के स्थान पर, निम्न रख दी जाये:–

'(ii) a provision requiring all Bills to be reserved for the consideration of the President after they are passed by the Legislature of the State;' "

मैंने जो संशोधन पेश किये हैं, उनके विषय में मैं कुछ शब्द कहना चाहता हूं। श्रीमान, मेरा यह मत है कि जब वित्तीय आपात का काल हो जब प्रान्तीय स्वायत्तता का पूर्णत: निलम्बन हो जाना चाहिये। इस विषय में कोई हिचक नहीं होनी चाहिये। मेरा यह मत है कि आपातकाल तब तक रहना चाहिये जब तक कि राष्ट्रपति स्वविवेक से उसे आवश्यक समझे। उद्घोषणा तब तक रहनी चाहिये जब तक कि आपात रहे। संसद के पास जाकर उससे यह पूछना व्यर्थ है कि कालावधि को बढ़ाया जाये या नहीं। राष्ट्रपति और केवल राष्ट्रपति ही यह सबसे अच्छी तरह निर्णय कर सकता है कि आपात समाप्त हुआ है या नहीं। राष्ट्रपति पर अविश्वास मत कीजिये—वह राज्य का प्रथम नागरिक है। वह संसद के किसी सदस्य से अधिक सच्चे अर्थ में भारत की जनता का प्रतिनिधि है। वह केन्द्र तथा प्रान्तों के विधान-मंडलों के प्रतिनिधियों द्वारा चुना जाता है। वह किसी एक निर्वाचन क्षेत्र से नहीं चुना जाता। अत: यह उचित ही है कि शक्ति केवल राष्ट्रपति के हाथों में होनी चाहिये।

मेरा यह ख्याल है कि हमारे ऐसा करने से किसी सांविधानिक अभिसमय का उल्लंघन नहीं होगा। क्योंकि संघानीय संविधान का आशय ही शक्तियों का पार्थक्य ही तो है। नये संविधान में हमारी संसद सम्पूर्ण-प्रभुत्व संपन्न निकाय नहीं होगी। मैं अमरीकी राष्ट्रपति का उदाहरण देता हूं। उसको बहुत-सी शक्तियां प्राप्त हैं। कोई यह नहीं कह सकता कि वह तानाशाह है या स्वेच्छाचारी है या कि उसे शक्तियां देने से संघवाद के किसी सिद्धान्त का अतिक्रमण हो गया है। अतएव मेरे ख्याल में उसके हाथों में शक्ति होनी चाहिये कि वह किसी परिस्थिति को, जो भविष्य में वित्तीय अस्थायित्व या गतिरोध के कारण उत्पन्न हो जाये, संभाल सके।

हमने कुछ वर्ष पूर्व ही अपनी स्वतंत्रता प्राप्त की है। क्या यह ठीक या उचित है कि हम अपने किसी नये विचार या कल्पना की वेदी पर अपनी स्वतन्त्रता

[श्री ब्रजेश्वर प्रसाद]

को बलिदान कर दें? हमारा राज्य ऐसे समय पर स्वतंत्र हुआ है जब कि राजनैतिक आकाश चिन्ता से भरा है। केवल इस देश की ही नहीं संसार के सब भागों की राजनैतिक तथा आर्थिक स्थिति सर्वनाश के निकट है।

अतएव हमारे संविधान में इन बातों का ध्यान रखना होगा।

श्रीमान, एक और बात है जिसका मन में ध्यान रखना चाहिये। संसदीय शासन की यह प्रणाली हमारे लोगों की आत्मीयता के सर्वथा विपरीत है। हमारे प्राचीन विधि-निर्माता ऋषि मुनि थे, संसद-वेत्ता नहीं थे। अतएव ऐसे देश में, जहां साक्षरता नहीं है, जहां जीवन स्तर बहुत नीचा है और जहां लोग सांप्रदायिक आवेगों के शिकार हैं, वहां वयस्क मताधिकार के आधार पर निर्वाचित संसद की बजाय मुझे राष्ट्रपति में अधिक श्रद्धा है। अतएव मेरे मतानुसार हमें संसद-वाद या किसी आदर्श-वाद की वेदी पर राज्य के हितों को बलिदान नहीं करना चाहिये। आदर्श केवल कल्पनायें ही हैं। वे धुंधले और अस्पष्ट हो सकते हैं। किन्तु राज्य एक ठोस कल्पना है, और हम राज्य के हितों का बलिदान नई विचारधाराओं की वेदी पर नहीं कर सकते। जर्मन दार्शनिक हीगल ने लिखा है कि "राज्य पृथ्वी पर भगवान ही है।" अतएव मेरा यह मत है कि यदि महत्वपूर्ण प्रश्नों को संसद द्वारा निर्णय के लिये छोड़ दिया जाये तो राज्य का अंत ही हो जायेगा। केवल अत्यन्त विकसित समाज में ही संसद प्रभावशाली भाग ले सकती है। भारत जैसे देश में उसका कार्य अवश्य गौण होगा। भविष्य में आने वाले लम्बे समय तक, कार्यपालिका और केवल कार्यपालिका का ही हमारे राष्ट्रीय जीवन में आधिपत्य होगा। यदि संविधान में इस तथ्य को स्वीकार नहीं किया जाता, तो संविधान टूट जायेगा और देश में अराजकता तथा गड़बड़ हो जायेगी।

***अध्यक्ष:** क्या आपने संशोधन संख्या 443 को पेश किया है?

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** हां, श्रीमान, तीनों संशोधन।

***अध्यक्ष:** सब संशोधन पेश किये जा चुके हैं और उन पर तथा अनुच्छेद पर अब चर्चा हो सकती है।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्य प्रान्त तथा बरार : जनरल): अध्यक्ष महोदय, कल, जब मेरे मित्र श्री कृष्णमाचारी ने मुझे बताया था कि वित्तीय आपात संबंधी एक खंड पेश होना है तो मैंने अनुभव किया कि शायद विधान-मंडल के अधिकारों तथा विशेषाधिकारों में कुछ और कमी की जाने वाली है। किन्तु जब यह अनुच्छेद मुझे कल रात को मिला तो मुझे स्वीकार करना होगा कि मैंने देखा कि यह अनुच्छेद उचित ही है; और अब जो परिस्थितियां हैं, और हो सकती हैं, उनमें मैं अवश्य अनुभव करता हूं कि यदि यह अनुच्छेद नहीं रखा जाता तो हमारा संविधान पूर्ण नहीं बनता। मैं मसौदा समिति को बधाई देता हूं कि इस अंतिम अवसर पर भी उसने समझ लिया कि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो सकती है, और इसलिये राष्ट्रपति को यह असाधारण शक्तियां दी जानी चाहियें। मेरे मित्र श्री कामत को अनावश्यक

आशंका है कि राष्ट्रपति इन शक्तियों का दुरुपयोग करेगा। श्री कामत ने कहा कि केवल घाटे का आयव्ययक होने मात्र से ही राष्ट्रपति यह घोषणा कर सकता है कि देश के वित्तीय स्थायित्व में आपात है। यदि हमारा राष्ट्रपति ऐसा है जो बजट में घाटा देखकर ही वास्तव में यह घोषणा कर दे कि वित्तीय आपात है, तो मुझे कहना होगा कि वह राष्ट्रपति उस उच्च पद को धारण करने के योग्य नहीं है जो उसे प्राप्त होगा, और मैं यह भी कह सकता हूं कि इसका उत्तरदायित्व सदन पर तथा उन लोगों पर होगा जो राष्ट्रपति का निर्वाचन करेंगे। किन्तु मुझे पूरा विश्वास है कि दोनों सदन वास्तव में योग्य और प्रसिद्ध, न्यायप्रिय तथा ठीक प्रकार के व्यक्ति को ही चुनेंगे जो उन शक्तियों का ठीक प्रकार प्रयोग करेगा और जो इस अनुच्छेद के उपबंधों को न्यायिक निर्वचन करेगा। मुझे ऐसी कोई आशंका नहीं है, चाहे भारत संघ का राष्ट्रपति कोई भी हो।

श्रीमान, खंड में क्या लिखा है? उसमें लिखा है:–

" 'If the President is satisfied that a situation has arisen whereby the financial stability or credit of India or of any part of the territory thereof is threatened, he may be a proclamation make a declaration to that effect.'

[यदि राष्ट्रपति का समाधान हो जाये कि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है जिससे भारत अथवा उसके राज्य-क्षेत्र के किसी भाग का वित्तीय स्थायित्व या प्रत्यय संकट में हो तो वह उद्घोषणा द्वारा उस बात की घोषणा कर सकेगा।]"

अब हमें दो ढाई वर्ष की स्वतंत्रता के अनुभव से पता है कि हमें जो राजनैतिक स्वतन्त्रता मिली है वह सम्पूर्ण है किन्तु जहां तक हमारी आर्थिक स्थिति का सम्बन्ध है, हमें अन्य देशों, के वित्तों पर निर्भर रहना पड़ता है क्योंकि हमने अपने वित्तों को अभी स्थिर नहीं बनाया है। मेरा इससे यह मतलब नहीं है कि अब आपात है। मैं केवल यही कह सकता हूं कि हमारे सामने यह आर्थिक स्थिति है, और चाहे इसके कारण कुछ भी हों, परन्तु उन कारणों को हमने पैदा नहीं किया है। किन्तु जिन परिस्थितियों में हम रहते थे या शासित होते थे उनके कारण और अंतर्राष्ट्रीय स्थिति के कारण, वर्तमान आर्थिक स्थिति उत्पन्न हुई है। यह आपात नहीं है किन्तु वास्तविक आपात उत्पन्न हो सकता है जिससे कि वित्तीय स्थायित्व पर असर पड़े, और यदि ऐसा अनुच्छेद हो तो हमारी बात सर्वथा उचित होगी, और मुझे जरा भी संदेह नहीं है कि उस समय इस अनुच्छेद से बहुत सहायता मिलेगी।

श्री कामत ने खंड (4) पर शोर मचाया है, किन्तु मैं उस अनुच्छेद का स्वागत करता हूं। उसमें क्या लिखा है? उसमें लिखा है कि राष्ट्रपति को शक्ति होगी कि आवश्यकता पड़ने पर वह कर्मचारियों के वेतनों तथा भत्तों को कम कर सकेगा।

***श्री एच.वी. कामत:** मुझे यही कठिनाई प्रतीत हुई कि यह शक्ति खंड (3) के अंतर्गत नहीं दी गई थी।

***श्री आर.के. सिधवा:** किन्तु खंड (4) में लिखा है:

" 'Notwithstanding anything contained in this Constitution—

any such direction may include (i) a provision requiring the reduction of salaries and allowances of all or any class of persons serving in connection with the affairs of a State.'

[इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी–

ऐसे किसी निदेश के अंतर्गत (1) राज्य के कार्यों के संबंध में सेवा करने वाले व्यक्तियों के सब या किन्हीं वर्गों के वेतनों और भत्तों में कमी की अपेक्षा करने वाले उपबंध भी हो सकेंगे।]"

आज हमें भली भांति ज्ञात है कि हमारे कर्मचारियों को केवल भारी वेतन ही नहीं मिलते वरन् उनकी संख्या भी अत्यधिक हैं। किन्तु उसके अतिरिक्त यह बहुत सुखद उपबंध है, और हमें, सबको इस बात का स्वागत करना चाहिये कि राष्ट्रपति को यह शक्ति दी गई है, क्योंकि हम जानते हैं कि संविधान में, हमने न्यायाधीशों के वेतनों का उपबंध कर दिया है और उन्हें आपात में कम नहीं किया जा सकता। हम न्यायाधीशों के उच्च वेतनों पर आपत्ति करते रहे हैं, और जब मसौदा समिति यह उपबंध रखती है कि वित्तीय अस्थायित्व के होने पर, राष्ट्रपति को वेतनों के भी कम करने का अधिकार होगा, तो हम कहते हैं, कि यह उचित नहीं है। मुझे यह सुन कर बहुत खेद है। दूसरी ओर मुझे मसौदा समिति की सराहना करनी होगी। मैं ऐसा व्यक्ति हूं कि जहां सराहना की आवश्यकता होती है वहां मैं सराहना करता हूं, यद्यपि मैं आवश्यकता पड़ने पर अपने कुछ विचारों को भी अभिव्यक्त कर देता हूं। न्यायाधीशों के विषय में भी, (ख) में हमने कहा है कि राष्ट्रपति उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के वेतनों को कम कर सकता है। मैं इस अनुच्छेद का स्वागत करता हूं। यह बात मेरे ध्यान में ही नहीं आई थी कि ऐसा उपबंध आवश्यक है, किन्तु इसे पढ़ने के बाद तथा यह देखने के बाद कि हमारे चारों ओर क्या हो रहा है, और क्या होने वाला है, मैं अनुभव करता हूं कि यह अत्यावश्यक है। हमें भावी घटनाओं को देखना चाहिये। हमें यह भी देखना चाहिये कि भविष्य में क्या होने वाला है। हम सदा अपने विचारों को वर्तमान तक ही सीमित करके संतुष्ट नहीं हो सकते हैं। राजनीतिज्ञ वह है जो भावी घटनाओं को पहले ही देख लेता है। राजनीतिज्ञ वह है जो यह पहले ही देख लेता है कि क्या होने वाला है।

हम जानते हैं कि हमने राजनैतिक स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली है, किन्तु जब तक हमारी स्थिति में पूर्णत: स्थायित्व नहीं आ जाता, तब तक हमारी प्राप्त की हुई राजनैतिक स्वतन्त्रता की ऐसी स्थिति रहेगी, हम मानवता की यथेष्ट सेवा नहीं कर सकेंगे। आज हम जानते हैं कि हमने इतनी विधियां पारित की हैं और हम जानते हैं कि विक्रय-कर संबंधी अनुच्छेद के विषय में कई सदस्यों को कुछ आशंका थी। और मैं अनुभव करता हूं कि उनकी यह भावना उचित ही है कि उन्हें अपने वित्तों को कम करना होगा और इसलिये वे अपनी बहुत-सी विकास योजनाओं को लागू नहीं कर सकेंगे। किन्तु फिर भी मैंने उस अनुच्छेद का समर्थन किया था

क्योंकि उससे देश का हित होगा। और जब भी कभी विधान मंडलों की या राष्ट्रपति की शक्तियों को कम करने का प्रश्न उठेगा तब ही हम उसके गुणावगुण पर विचार करेंगे, और वर्तमान प्रश्न के गुणावगुण कर विचार करके मैं अनुभव करता हूं कि यह अनुच्छेद पूर्णत: उचित है और मुझे विश्वास है कि राष्ट्रपति, चाहे वह कोई भी हो, अपनी शक्तियों का ठीक प्रयोग करेगा, और इस अनुच्छेद का निर्वचन ठीक अर्थ में और ठीक तरीके से और देश के लाभार्थ तथा इस देश की जनता के लाभार्थ ही करेगा। इन शब्दों के साथ मैं डॉ. अम्बेडकर के संशोधन, अनुच्छेद 280क का समर्थन करता हूं।

मैं कुछ और कहना नहीं चाहता। किन्तु यदि आप अनुच्छेद को तथा खंड (4) के उपखंड (2) के उपबंधों को देखें तो आपको पता लगेगा कि वह धन विधेयकों के भी संबंध में है। राष्ट्रपति को यह देखने की शक्ति दी गई है कि यदि वह अनुभव करता है कि अनुच्छेद 174 तथा 182 के उपबंधों के कारण देश के वित्तीय स्थायित्व को खतरा हो सकता है तो वह निस्संदेह अपनी शक्ति का प्रयोग करेगा और इस अनुच्छेद 280क को लागू करने में रोक लगा देगा। किन्तु जैसा कि अनुच्छेद की प्रस्तावना में लिखा है यह तभी होगा जब कि आपातिक स्थिति हो जहां तक कि वित्तीय स्थायित्व का संबंध है। मुझे ऐसी कोई आशंका नहीं है कि इस अनुच्छेद का राष्ट्रपति दुरुपयोग करेगा, और इन शब्दों के साथ मैं इसका समर्थन करता हूं।

***पं. हृदय नाथ कुंजरू:** अध्यक्ष महोदय, संशोधन के प्रस्तावक ने संशोधन का औचित्य न बताने का यह बहाना बना दिया कि यह निश्चित है कि प्रत्येक सदस्य इसकी आवश्यकता को समझता है। अपने उत्तरदायित्व से पीछा छुटाने का उसके लिये यह बहुत सीधा रास्ता था। उन्होंने संशोधन की सफाई पेश करने का दिखावा करने के लिये अमरीकी राष्ट्रीय रिकवरी अधिनियम का निर्देश किया। अब, उस अधिनियम का उद्देश्य अमरीकी राष्ट्र को उस महान आर्थिक संकट से पार कराना था जो 1930 के लगभग संयुक्त राज्य अमरीका में तथा अन्य देशों में भी आया था। क्या इस संशोधन में कोई ऐसी बात है जिससे कि भारत सरकार आर्थिक संकट आने पर उसका सामना वैसे ही कर सकेगी, जैसे राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने करने का प्रयत्न किया था? संशोधन का सारा उद्देश्य यह मालूम होता है कि व्यय को कम किया जाये और प्रान्तीय सरकारों को अपने किसी विद्यमान राजस्व-स्रोत को छोड़ने से रोका जाये। क्या ऐसे संशोधन की तुलना किसी प्रकार संयुक्त राज्य के राष्ट्रीय रिकवरी अधिनियम से पासंग भर भी की जा सकती है?

श्रीमान मुझे विश्वास है कि इस सदन को प्रत्येक सदस्य यह स्वीकार करेगा कि केन्द्रीय सरकार को जो शक्तियां प्रदान की जा रही हैं वह अत्यन्त कठोर शक्ति हैं। अत: हमारे लिये यह समझना आवश्यक है कि क्या कारण है कि संविधान के द्वितीय पठन पर वाद-विवाद के अंत में अनुच्छेद 280क को संविधान में प्रविष्ट करने की प्रस्थापना की गई है। इस मामले को संविधान के अन्य वित्तीय उपबंधों के साथ भी निबटाया जा सकता था। किन्तु ऐसा नहीं किया गया इससे पता लगता है कि वित्तीय अनुच्छेदों पर विचार किया गया था तब ऐसी आवश्यकता अनुभव नहीं की गई थी कि केन्द्रीय सरकार को प्रान्तों के आय-व्ययकों पर पूर्ण

[पं. हृदय नाथ कुंजरू]

नियंत्रण रखने की शक्ति दी जाये। उस समय के बाद, इस संशोधन को रखने क्या आवश्यकता पैदा हो गई है। श्रीमान, संशोधन के खंड (4) में ऐसे मामले हैं जो राष्ट्रपति द्वारा दिये गये निदेशों में रखे जा सकते हैं जब कि यह उद्घोषणा की जा चुकी हो, कि भारत का या उसके किसी भाग का वित्तीय स्थायित्व या प्रत्यय संकट में है। राष्ट्रपति को शक्ति होगी कि वह किसी राज्य को निदेश दे सके कि वह राज्य 'वित्तीय औचित्य के ऐसे नियमों' का पालन करे जो उसके निदेश में उल्लिखित हों। खंड (4) में, उदाहरण है कि राष्ट्रपति कैसे निदेश दे सकता है। इस खंड के उपखंड (क) से राष्ट्रपति को शक्ति मिलती है कि वह राज्य को आदेश देकर सब सरकारी सेवकों के या उनके किसी वर्ग के वेतनों तथा भत्तों को कम कर सकता है। श्रीमान, हमें कुछ ही वर्ष पूर्व गम्भीर आर्थिक कठिनाई में से गुजरना पड़ा था। इसका प्रभाव केवल केन्द्रीय सरकार पर ही नहीं, वरन्, प्रान्तों पर भी पड़ा था। क्या फिर प्रान्त अपना व्यय करने में पीछे थे? क्या उन्होंने अपने सरकारी सेवकों के वेतन कम करने में अनिच्छा दिखाई थी या उन्होंने केन्द्रीय सरकार के उदाहरण को मान कर सब प्रकार के सरकारी कर्मचारियों के वेतनों को प्रसन्नता से कम कर दिया था? हमारे सामने यह अनुभव होते हुए ऐसा संशोधन सदन में प्रस्थापित करना हमारे लिये आवश्यक क्यों हुआ? क्या कारण है कि सब विगत अनुभवों की उपेक्षा करके हम प्रान्तों में पूर्ण अविश्वास दिखायें तथा उनसे ऐसा व्यवहार करें जैसे कि वे बच्चे हैं और राष्ट्रपति मास्टर हैं?

श्रीमान, उपखंड (क) की मद (2) में लिखा है कि राष्ट्रपति आदेश दे सकता है कि धन-विधेयकों या अन्य विधेयकों को, जिनको अनुच्छेद 182 के उपबंध लागू हैं, राज्य के विधान मंडल के द्वारा उनके पारित किये जाने के पश्चात् उसके विचार के लिये रक्षित किया जाये।

सदन को ज्ञात है कि धन-विधेयक की क्या परिभाषा है। धन-विधेयक किसी विधेयक को कह सकते हैं जिसमें अन्य बातों के अतिरिक्त किसी कर के आरोपण, समाप्ति, परिवर्तन, विनियमन आदि का उपबन्ध हो। मेरे विचार में इन शब्दों से हमें पता लग जाता है कि हमारे समक्ष जो संशोधन पेश किया गया है, उसका क्या आशय है। प्रांत स्वयं कोई ऐसी बात कर ही क्यों सकता है जिससे भारत का वित्तीय स्थायित्व या प्रत्यय संकट में पड़ जाये। हद से हद वह अपनी हानि कर सकता है। किन्तु यदि हम प्रांतीय सूची में उल्लिखित राजस्व-स्रोतों को देखें तो हमें पता लगेगा कि ऐसा कोई स्रोत है ही नहीं जिसके प्रयोग से केन्द्र या प्रांत के वित्तीय स्थायित्व को खतरा हो सकता हो। यदि कोई प्रांत अपनी मूर्खता से अपने आपको कठिन वित्तीय स्थिति में डाल देता है तो उसे अपनी गलतियों से पाठ क्यों न सीखने दिया जाये?

शायद, श्रीमान, सदन को इसमें दिलचस्पी होगी यदि प्रांतीय आय के मुख्य स्रोतों को गिना दूं। वे ये हैं: मुख्यतः भू-राजस्व, संघ सूची में उल्लिखित मुद्रांक-शुल्कों के अतिरिक्त अन्य मुद्रांक शुल्क, कृषि-भूमि के उत्तराधिकार के विषय

में शुल्क, कृषि आय पर आय-कर, मद्यसारिक, पानों आदि पर उत्पादन-शुल्क, विक्रय कर जिसमें विद्युत के उपभोग पर कर भी शामिल हैं, और विलास तथा प्रमोद पर तथा प्रमोद वस्तुओं पर कर।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** यानों पर कर का क्या हुआ?

***पं. हृदय नाथ कुंजरू:** मैंने उसका उल्लेख इसलिये नहीं किया है कि यान-कर आदि प्राय: स्थानीय निकायों के लाभार्थ प्रयुक्त होते हैं। अब, इन राजस्व-स्रोतों में से प्रान्त किनका दुरुपयोग कर सकते हैं? कुछ प्रांतों ने केन्द्र के अनुमोदन से जिस नीति को अपनाया है यदि उस पर अन्य प्रांत भी चलेंगे तो भू-राजस्व अवश्यमेव कम हो जायेंगे और उसके कम होने पर केन्द्रीय सरकार को शिकायत नहीं हो सकती। प्रांतों की सरकारों ने अब तक मुद्रांक-शुल्क की दरों को बढ़ाने की या विक्रय-कर अथवा कृषि आय का यथासंभव प्रयोग करने की कोई अनिच्छा प्रकट नहीं की है।

केवल एक ही कर है जिसके विषय में केन्द्रीय सरकार तथा कुछ प्रांतीय सरकारों में गम्भीर मतभेद हो गया है, वह है मद्यसारिक पानों तथा कुछ पिनक वाले पदार्थों पर उत्पादन-शुल्क। मुझे पता लगा है कि भारत सरकार द्वारा बार-बार मंत्रणा देने पर भी कुछ प्रांत मद्य-निषेध की नीति पर चल रहे हैं। जिससे कुछ समय के पश्चात् उत्पादन-कर से सब राजस्व पूर्णत: समाप्त हो जायेगा। केन्द्रीय सरकार की मंत्रणा शायद बिल्कुल ठीक हो। भारतीय वित्त के विद्यार्थियों के मत में विद्यमान स्थिति में ऐसा आवश्यक हो सकता है कि प्रांतों को पूर्ण मद्य-निषेध के उपायों को पूरा करने में धीरे-धीरे चलना चाहिये। केन्द्र तथा प्रांत दोनों ही वित्तीय कठिनाइयों में फंसे हुए हैं, और यह ठीक नहीं मालूम होता कि ऐसे समय पर किसी प्रांत को कोई बड़ा राजस्व स्रोत छोड़ देने का प्रयत्न करना चाहिये। सिद्धान्तानुसार यह अभीष्ट हो सकता है कि मद्यसारिक पानों तथा पिनक लाने वाले पदार्थों के प्रयोग को बिल्कुल बंद कर दिया जाये, किन्तु हमें संसार की सब अच्छी वस्तुएं एक दम प्राप्त नहीं हो सकतीं। अत: प्रांतों के लिये यह आवश्यक होगा कि वे संयम रखें तथा इस सुधार के लिये समुचित समय आने तक ठहरे रहें।

किन्तु यदि वे केन्द्रीय सरकार की बात नहीं सुनते तो क्या इसी कारण अनुच्छेद 280क द्वारा भारत सरकार को ऐसी कठोर शक्ति दे दी जाये कि एक बार राष्ट्रपति द्वारा यह उद्घोषणा होते ही कि समूचे भारत का भी नहीं, केवल उसके एक भाग का वित्तीय स्थायित्व संकट में है, प्रांत केन्द्रीय सरकार की इच्छा के विरुद्ध कुछ न कर सकें? जब भी प्रांत और केन्द्रीय सरकार के बीच गम्भीर मतभेद हो, तभी राष्ट्रपति से यह घोषणा करवाई जा सकती है कि प्रांत का वित्तीय स्थायित्व या प्रत्यय संकट में है, फिर अनुच्छेद 280क के सभी परिणाम प्रकट हो जायेंगे। प्रांत के आय-व्ययक पर केन्द्र का पूर्ण नियंत्रण हो जायेगा और केन्द्र प्रांतीय सरकार तथा प्रांतीय विधान-मंडल दोनों को आदेश दे सकेगा कि वे किन वित्तीय नीतियों को अपनायें।

यह अनुच्छेद भारत के साधनों का केन्द्र तथा प्रान्तों में अधिक अच्छा विभाजन करने के विषय में नहीं है। इसका उद्देश्य केन्द्रीय सरकार को ऐसी शक्ति प्रदान

[पं. हृदय नाथ कुंजरू]

करना नहीं है जिससे कि वह बेकारों की सहायता, या सार्वजनिक निर्माण, या उनमें से किसी समस्या को हल कर सके जिनके हल से आर्थिक संतोष उत्पन्न होगा और भारत की समृद्धि बढ़ेगी। इसका उद्देश्य बिल्कुल भिन्न है। संशोधन के प्रस्तावक ने इस संशोधन के औचित्य को सिद्ध करने के लिये कोई कारण नहीं बताये हैं, अतः हमें ही यथाशक्ति यह सोचना है कि संविधान में ऐसा अनुच्छेद रखने के लिये केन्द्रीय सरकार क्यों सहमत हुई है। इन प्रांतों के हाल ही के वित्तीय इतिहास को देखते हुए मुझे कोई कारण दिखाई नहीं देता कि केन्द्रीय सरकार क्यों चिंतित है कि उसे प्रांतों पर वित्तीय नियंत्रण रखने की शक्ति मिल जाये, केवल वही कारण हो सकता है जो कि मैंने बताया है।

यह तो सदन को ही निश्चय करना है कि क्या इस संविधान को एकात्मक प्रकार का संविधान बना दिया जाये, जब कि उस दिन हमारे प्रधान मंत्री ने अमरीकी प्रतिनिधि-सभा तथा सीनेट के समक्ष अपने अभिभाषण में कहा था कि यह संविधान संघानवाद के सिद्धान्त पर आधारित है जो कि हमने अमरीकी संविधान से लिया है। यदि संविधान संघानीय हो तब भी क्या केन्द्रीय सरकार के लिये यह बुद्धिमानी होगी कि वह प्रांतों के वित्तीय स्वविवेक को कुचलने का प्रयत्न करे, चाहे उनके उपायों से उनकी हानि ही क्यों न हो? प्रांतों में लोकतंत्र कैसे स्थापित होगा, विधान-मंडलों के सदस्यों में उत्तरदायित्व की भावना कैसे पैदा होगी, मंत्री अनुभव से पाठ कैसे सीख सकेंगे, जब तक कि उन्हें अपनी गलतियों के परिणामों का सामना करने के लिये अवसर न दिया जाये। यदि केन्द्र प्रत्येक बात में हस्तक्षेप करना चाहता है, यदि वह चाहता है कि वह ऐसा पूर्ण नियंत्रण रख सके कि कोई ऐसी बात न होने दी जाये जिससे किसी प्रांत के या भारत के हितों को हानि हो, तो हमें लोकतंत्र से विदा लेनी चाहिये। केन्द्र तो यही चाहेगा कि उसे संविधान में जितना नियंत्रण सौंपा गया है वह उससे भी अधिक नियंत्रण रखे, यदि हम विगत अनुभव से या तथ्य से निर्णय करेंगे तो यही बात पता लगेगी। किन्तु इससे ठीक काम नहीं चलेगा और मैं यह कह सकता हूं कि प्रस्तावक ने इस संशोधन के स्वीकार करने के लिये जरा भी औचित्य सिद्ध नहीं किया है।

***श्री के.एम. मुंशी** (बंबई : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं अपने माननीय मित्र, पंडित कुंजरू की भावनाओं को, जो उन्होंने इस 280क के विरोध में प्रकट की हैं, आसानी से समझ करता हूं, किन्तु वे भी उस गम्भीर स्थिति को समझ जायेंगे जिसका निर्देश मेरे मित्र डॉ. अम्बेडकर ने पहले ही कर दिया है। संसद में, अर्थात् इस सदन के दूसरे अंग में जो बहस एक पखवारे पहले हुई थी, उससे स्पष्ट पता लग गया था कि देश गर्त के किनारे पर ही है, और मैं नहीं समझता कि आज हमारे समक्ष जो कठिनाई है वह उससे किसी प्रकार भी कम महत्वपूर्ण है, जो फ्रांस में, 1937 में आई थी जब कि उसने जून 1937 की विधि पारित की थी या जब कि 1933 में संयुक्त राज्य अमरीका ने ऐसा ही उपाय किया था। मैं राष्ट्रीय रिकवरी अधिनियम की प्रस्तावना को, जो अमरीका में स्वीकार किया गया था, पढ़कर सुना देता हूं।

"A national emergency productive of widespread unemployment and disorganization to industry which burdens the State and foreign commerce and affects the public welfare and undermines the standard of living of the American people is hereby said to exist.'

[एतद्द्वारा यह घोषित किया जाता है कि आर्थिक आपात है जिससे विस्तृत बेकारी तथा उद्योग का विघटन उत्पन्न होता है जिससे राज्य के तथा विदेशी वाणिज्य पर भार पड़ता है और लोक कल्याण पर प्रभाव पड़ता है और अमरीकी लोगों का जीवनस्तर गिरता है।]"

यदि मेरे माननीय मित्र पंडित कुंजरू उन वक्तृताओं को पढ़ेंगे जो अवमूल्यन की बहस में इस सदन के सदस्यों तथा वित्त मंत्री ने दी थीं, तो मुझे भरोसा है कि उन्हें विश्वास हो जायेगा कि इस समय देश में जैसी स्थिति है उसमें केन्द्र के हाथों में वैसी ही विस्तृत शक्तियां होनी चाहियें जो अनुच्छेद 280क में निहित हैं। उनकी यह आशंका वास्तविक नहीं है कि कार्यकर्ता बढ़ जायेंगे, क्योंकि जब केन्द्र अनुच्छेद 280 के अंतर्गत काम करेगा तो वह राज्य के कर्मचारियों के द्वारा ही काम चलायेगा। वह प्रांतीय व्यवस्था के स्थान पर अपनी व्यवस्था को नियोजित नहीं करेगा। दूसरी युक्ति भी पूर्णतः ठीक नहीं है कि प्रांत केन्द्र की अनुमति के बिना कुछ भी नहीं कर सकते। साधारण परिस्थितियों में जब कि देश के वित्त स्थिर हों, जब तक देश का प्रत्यय स्थिर है, तब तक इस अनुच्छेद को लागू करने की कोई संभावना नहीं है। इसे तभी लागू किया जायेगा जब कि वित्तीय आपात होगा और तब तक प्रांतों को पूरी स्वतन्त्रता है कि वे जो चाहें करें। यह 'मास्टर' के समान दृष्टिकोण नहीं है जैसा कि इसे बताया गया है। दृष्टिकोण यह है कि जब देश की वित्तीय व्यवस्था टूट जायेगी तब केन्द्र हस्तक्षेप करेगा।

संविधान के इस अनुच्छेद में एक सर्वोच्च तथ्य को स्वीकार किया गया है कि देश की आर्थिक व्यवस्था एक है तथा अखंड है। यदि कोई प्रांत आर्थिक रूप में ठप्प हो जाता है तो इसका प्रभाव केन्द्र की वित्त व्यवस्था पर पड़ेगा, यदि केन्द्र कठिनाई में होगा तो सब प्रान्त ठप्प हो सकते हैं। अतः प्रान्तों तथा केन्द्र की पारस्परिक निर्भरता इतनी अधिक है कि देश की समूची वित्तीय अखंडता एक है और ऐसा समय आ सकता है जब कि एकात्मक नियंत्रण सर्वथा अपेक्षित हो जाये।

श्रीमान, मैं यह भी कहना चाहता हूं कि अब तक इस सदन ने जो विविध अनुच्छेद पारित किये हैं उनमें उपबंध है कि आपात में, साधारण समयों में भी, केन्द्र तथा प्रांतों के बीच कुछ एकीकरण होगा। मैं केवल अनुच्छेद 226 का निर्देश दूंगा। जिसके अनुसार उच्च सभा के मतदान से यह निश्चय हो सकता है कि राज्य सूची की किसी मद को केन्द्र को हस्तांतरित कर दिया जाये। हमारे यहां मनोनीत राज्यपाल होंगे जिन्हें हमने निर्वाचित राज्यपाल के स्थान पर स्वीकार किया है। हमने अनुच्छेद 275 तथा 278 में आपात की धारायें रखी हैं: जब प्रान्त का

[श्री के.एम. मुंशी]

सांविधानिक ढांचा टूट जाये तब केन्द्र हस्तक्षेप कर सकता है। उदाहरण के लिये, जब देश के किसी भाग में आंतरिक उपद्रव का संकट हो तब केन्द्र आपात-विधान द्वारा हस्तक्षेप कर सकता है। परन्तु क्या यह सुझाव दिया जा रहा है कि यदि समूचे देश की वित्तीय व्यवस्था ठप्प हो जाये तो केन्द्र को चुप बैठे रहना चाहिये और कुछ नहीं करना चाहिये? अतएव मेरा निवेदन है कि हमने जो ढांचा बनाया था उसे हमने किसी प्रकार छोड़ा नहीं है।

केवल एक शब्द और कह कर मैं समाप्त कर दूंगा: मेरे मित्र पं. कुंजरू ने कहा था कि अनुच्छेद के प्रस्तावक डॉ. अम्बेडकर ने इसका उद्देश्य नहीं समझाया। मेरे विचार में इसका उद्देश्य तो इससे स्वयं ही प्रकट हो जाता है। केवल इसी सरकार की यह इच्छा नहीं है कि वे प्रांतों में हस्तक्षेप करें, वरन भारत की प्रत्येक सरकार की यह इच्छा होनी चाहिये कि वह देखें कि भारत के वित्तीय स्थायित्व को हर कीमत पर और प्रत्येक परिस्थिति में बनाये रखा जाये। किसी सरकार के समक्ष यही प्रधान भावना है, चाहे यह सरकार हो या कोई और।

हमने प्रस्तावना में, जो कल सदन के समक्ष आयेगी, लिखा है कि भारत के सम्पूर्ण-प्रभुत्व-सम्पन्न लोग इस संविधान को बनाते हैं। सम्पूर्ण-प्रभुत्व-सम्पन्न लोग सब लोग नहीं हैं, वरन् भारत के सम्पूर्ण-प्रभुत्व-सम्पन्न लोग जो एक इकाई के रूप में अपने उच्चतम निकाय, संविधान-सभा के द्वारा काम करते हैं, वे ही समस्त देश के लिये संविधान का निर्माण कर रहे हैं। कोई प्रान्तीय स्वायत्तता नहीं है, उनके द्वारा या उनके लिये कोई संधान नहीं बन रहा है; वे पवित्र शब्द नहीं हैं। प्रत्येक सरकार को भारत के सम्पूर्ण-प्रभुत्व-सम्पन्न लोगों की आवश्यकताओं को पूरा करना होगा। वित्तीय आपात में इससे बड़ा विशेषाधिकार कोई नहीं हो सकता कि सब वित्तीय मामलों पर केन्द्र का नियंत्रण तथा निदेश हो, जैसा कि 280क में रखा गया है। यही उद्देश्य है, और मेरा निवेदन है कि यह ऐसा उद्देश्य है जिसके बिना संविधान अपूर्ण रहेगा और मैं सदन से अनुरोध करता हूं कि वह इस अनुच्छेद को एकमत से स्वीकार कर ले।

***अध्यक्ष:** क्या आपको कुछ कहना है।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: यदि आप समझते हैं कि मेरा बोलना आवश्यक है तो मैं बोल दूंगा।

***अध्यक्ष:** नहीं, नहीं। मैं यह नहीं कहता। तो फिर मैं संशोधन पर मत लेता हूं।

***श्री एच.वी. कामत:** मेरा सुझाव है कि डॉ. अम्बेडकर 'threatened' शब्द के स्थान पर 'gravely threatened' इन शब्दों को रखने पर विचार करें।

***अध्यक्ष:** आपने अपना सुझाव दे दिया था। वे विचार कर लेंगे कि वह विचार-योग्य है या नहीं। मैं नहीं समझता कि डॉ. अम्बेडकर को सुझाव देने के रूप में आपको दूसरा भाषण करने की अनुमति मिलनी चाहिये।

श्री रोहिणी कुमार चौधरी (आसाम : जनरल): मैं अपना एक मात्र भाषण देना चाहता था।

***अध्यक्ष:** परन्तु मैं वाद-विवाद को पहले ही समाप्त कर चुका हूं।

प्रश्न यह है:

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क के खंड (1) में, 'has arisen' इन शब्दों के स्थान पर 'is imminent' ये शब्द रख दिये जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क के खंड (1) में, 'whereby the financial stability or credit of India or any part of the territory thereof is threatened' इन शब्दों के स्थान पर 'which threatens India or any part thereof with financial breakdown or economic disaster' ये शब्द रख दिये जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क के खंड (1) में, 'threatened' शब्द के पश्चात् 'or is likely to be threatened' ये शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क के खंड (2) के स्थान पर निम्न रख दिया जाये:–

'(2) The proclamation issued under clause (1) of this article shall continue till such time it is revoked by the President.'

[इस अनुच्छेद के खंड (1) के अधीन की गई उद्घोषणा उस समय तक जारी रहेगी जब तक कि राष्ट्रपति उसे समाप्त न कर दे।]"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क के खंड (3) में, 'operation' शब्द के पश्चात्, 'Parliament shall have power to make laws in respect of subjects contained in the State list as if they were subjects in the Concurrent List, and' ये शब्द प्रविष्ट कर दिये जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क के खंड (4) हटा दिया जाये।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क के खंड (4) के उप-खंड (क) कंडिका (2) के स्थान पर निम्न रख दी जाये:—

'(ii) a provision requiring all Bills to be reserved for the consideration of the President after they are passed by the Legislature of the State.' "

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 429 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 280क के खंड (5) को हटा दिया जाये।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** अब मैं डॉ. अॅबेडकर के मूल संशोधन पर मत लूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 280 के पश्चात्, निम्न नया अनुच्छेद प्रविष्ट कर दिया जाये:–

'280A. (1) If the President is satisfied that a situation has arisen whereby the financial stability or credit of India or of any part of the territory thereof

Provisions as to financial emergency.

is threatened, he may by a proclamation make a declaration to that effect.

(2) The provisions of clause (2) of article 275 of this Constitution shall apply in relation to a proclamation issued under clause (1) of this article as they apply in relation to a Proclamation of Emergency issued under clause (1) of the said article 275.

(3) During the period any such proclamation as is mentioned in clause (1) of this article is in operation, the executive authority of the Union shall extend to the giving of directions to any State to observe such canons of financial propriety as may be specified in the directions, and the giving of such other directions as the President may deem necessary and adequate for the purpose.

(4) Notwithstanding anything contained in this Constitution—

(a) any such direction may include—

(i) a provision requiring the reduction of salaries and allowances of all or any class of persons serving in connection with the affairs of a State;

(ii) a provision requiring all Money Bills or other Bills to which the provisions of article 182 of the Constitution apply to be reserved for the consideration of the President after they are passed by the Legislature of the State.

(b) it shall be competent for the President during the period any proclamation issued under clause (1) of this article is in operation to issue directions for the reduction of salaries and allowances of all or any class of persons serving

[अध्यक्ष]

in connection with the affairs of the Union including the judges of the Supreme Court and the High Courts.

(5) Any failure to comply with any directions given under clause (3) of this article shall be deemed to be a failure to carry on the Government of the State in accordance with the provisions of this Constitution.'

वित्तीय आपात के बारे में उपबन्ध।

[280क. (1) यदि राष्ट्रपति का समाधान हो जाये कि ऐसी स्थिति पैदा हो गई है जिससे भारत अथवा उसके राज्य-क्षेत्र के किसी भी भाग का वित्तीय स्थायिल या प्रत्यय संकट में हो तो वह उद्घोषणा द्वारा उस बात की घोषणा कर सकेगा।

(2) अनुच्छेद 275 के खंड (2) के उपबन्ध इस अनुच्छेद के अधीन निकाली गई उद्घोषणा के सम्बन्ध में वैसे ही लागू होंगे जैसे कि वे अनुच्छेद 275 के अधीन निकाली गई आपात की उद्घोषणा के लिये लागू होते हैं।

(3) उस कालावधि में जिसमें कि खंड (1) में वर्णित कोई उद्घोषणा प्रवर्तन में रहती है संघ की कार्यपालिका शक्ति किसी राज्य को वित्तीय औचित्य सम्बन्धी ऐसे सिद्धान्तों का पालन करने के लिये निदेश देने तक, जैसे कि निदेशों में उल्लिखित हों तथा ऐसे अन्य निदेश देने तक, जिन्हें, राष्ट्रपति उस प्रयोजन के लिये देना आवश्यक और समुचित समझे विस्तृत होगी।

(4) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी–

(क) ऐसे किसी निदेश के अन्तर्गत–

(1) राज्य के कार्यों के सम्बन्ध में सेवा करने वाले व्यक्तियों के सब या किन्हीं वर्गों के वेतनों तथा भत्तों में कमी की अपेक्षा करने वाले उपबन्ध,

(2) धन-विधेयकों अथवा अन्य विधेयकों को, जिनको अनुच्छेद 182 के उपबन्ध लागू हैं, राज्य के विधान-मंडल के द्वारा उनके पारित किये जाने के पश्चात् राष्ट्रपति के विचार के लिये रक्षित करने के लिये उपबन्ध, भी हो सकेंगे,

(ख) उस कालावधि में, जिसमें कि इस अनुच्छेद के अधीन निकाली गई उद्घोषणा प्रवर्तन में है, उच्चतम न्यायालय

और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के सहित, संघ के कार्यों के सम्बन्ध में सेवा करने वाले व्यक्तियों के सब या किसी वर्ग के वेतनों और भत्तों में कमी के लिये निदेश निकालने के लिये राष्ट्रपति सक्षम होगा।

(5) इस अनुच्छेद के खण्ड (3) के अधीन दिये गये निदेशों का पालन करने में असफलता को भी इस संविधान के उपबन्धों के अनुसार राज्य का शासन चलाने की असफलता समझा जायेगा।]"

प्रस्ताव स्वीकृत हो गया।

अनुच्छेद 280क संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 85

***अध्यक्षः** अब हम अन्य मदों को लेंगे।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** श्रीमान, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 85 के खंड (3) के स्थान पर निम्न खंड रख दिया जाये:—

'(3) In other respects, the privileges, immunities and powers of each House of Parliament and of the members and the Committees of each House shall be such as may from time to time be defined by Parliament by law, and until so defined, shall be those of the House of Commons of the Parliament of the United Kingdom and of its members and committees at the commencement of this Constitution.'

[(3) अन्य बातों में, संसद के प्रत्येक सदन की तथा प्रत्येक सदन के सदस्यों और समितियों की शक्तियां, विशेषाधिकार और उन्मुक्तियां ऐसी होंगी, जैसी संसद, समय-समय पर, विधि द्वारा परिभाषित करे, तथा जब तक इस प्रकार परिभाषित नहीं की जातीं, तब तक वे ही होंगी जो इस संविधान के प्रारम्भ पर इंग्लिस्तान की पार्लियामेंट के हाउस ऑफ कामन्स की तथा उसके सदस्यों और समितियों की हैं।]"

इस परिवर्तन को करने का कारण यह है कि उप-खंड का क्षेत्र विस्तृत करना है क्योंकि मूल खंड में केवल सदस्यों के विशेषाधिकारों तथा उन्मुक्तियों का उल्लेख था। वर्तमान खंड में यही करने का प्रयत्न किया गया है कि इसे प्रत्येक सदन के सब सदस्यों और समितियों पर लागू कर दिया गया है। यह इसलिये आवश्यक हो गया है कि हमने अनुसूची 7, सूची 1, प्रविष्टि मैं संसद की विधायिनी शक्ति का उपबन्ध 69क में किया है। वह विधायिनी शक्ति इस प्रकार है:

"संसद के प्रत्येक सदन के तथा प्रत्येक सदस्यों के और समितियों के विशेषाधिकार, के उन्मुक्तियां और शक्तियां।"

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

अनुच्छेद 85 के उप-खंड (3) को उस प्रविष्टि के अनुरूप बनाने के लिये, यह संशोधन पेश किया गया है। सदन के माननीय सदस्य कृपया ध्यान दें कि इसका उद्देश्य सदनों के सदस्यों के तथा समितियों के विशेषाधिकारों, उन्मुक्तियों तथा शक्तियों को विस्तृत करना ही है और यह ऐसा मामला नहीं है जिस पर विवाद हो क्योंकि यह सदन द्वारा 69क, सूची 1, अनुसूची 7 की स्वीकृति के फलस्वरूप ही है।

***माननीय श्री के. सन्तानमः** खंड (4) में भी समितियों को वही विशेषाधिकार दिये गये हैं जो कि सदस्यों को दिये गये हैं।

***अध्यक्षः** यह सदन के सम्बन्ध में भी है, केवल सदस्यों के लिये ही नहीं है।

एक और संशोधन है जिसकी सूचना श्री ब्रजेश्वर प्रसाद ने दी है। किन्तु वह एक अन्य संशोधन—सं. 397 में आ जाता है। अतः इसका प्रश्न नहीं उठता।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** किन्तु अगले पृष्ठ पर दो भाग (क) तथा (ख) हैं।

***अध्यक्षः** हां, 3 (ख) है। परन्तु क्या यह संविधान का विषय है? राष्ट्रपति श्वेत-पत्र निकालेगा, यह संविधान का विषय नहीं है। यदि राष्ट्रपति को श्वेत-पत्र निकालने का सुझाव दिया जायेगा तथा यदि सभा में प्रस्ताव पारित होगा तो वह श्वेत-पत्र निकाल देगा।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** सारा प्रयोजन तो यह जानने का है कि हाउस ऑफ कामन्स के सदस्यों की शक्तियां तथा विशेषाधिकार क्या हैं।

***अध्यक्षः** आप राष्ट्रपति से श्वेत-पत्र निकालने के लिये कह सकते हैं, किन्तु यह संविधान का अंग नहीं बन सकता।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** मैं इस संशोधन में मौखिक परिवर्तन कर सकता हूं।

***अध्यक्षः** मेरे विचार में, हम इसे छोड़ दें तो अच्छा रहेगा।

***श्री आर.के. सिधवाः** श्रीमान, जब इस अनुच्छेद पर पिछली बार चर्चा हुई थी, तब हमें निश्चित ज्ञान नहीं था कि हाउस ऑफ कामन्स के सदस्यों के विशेषाधिकार क्या हैं। मैंने 'मे' की पुस्तक 'संसदीय प्रक्रिया' से मालूम करना चाहा परन्तु मुझे पता नहीं लग सका। अतः, हमें कुछ पता होना चाहिये कि हाउस ऑफ कामन्स के सदस्यों के विशेषाधिकार क्या हैं। अन्यथा संसद में संघर्ष पैदा हो सकता है। संसद के निर्माण के पश्चात् दो तीन वर्ष तक भी शायद ये विशेषाधिकार लिखित रूप में न आ सकें, क्योंकि मुझे पता है कि अब तक विशेषाधिकारों का कोई अधिनियम नहीं बन सका है, यद्यपि भारत शासन अधिनियम, 1935 के अन्तर्गत यह उपबन्ध है कि सदस्यों के विशेषाधिकारों का अधिनियम बनेगा; दो प्रांतों के अतिरिक्त वे न केन्द्र में और न किसी प्रान्त में ही अब तक लिखित रूप में बने हैं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान, मैं आपकी अनुमति से अपने मित्र श्री सिधवा को सूचना दे सकता हूं कि वह चर्चा हुई थी उसके बाद मैंने कुछ खोज की है और मुझे पता लगा है कि दक्षिण अफीका की संसद ने उन्मुक्तियों तथा विशेषाधिकारों को परिभाषित करने वाला एक अधिनियम पारित किया है। मेरे पास एक प्रतिलिपि है। यदि वे चाहें तो उन्हें यह पढ़ने के लिये दे सकता हूं। बाद में हमारी संसद के लिये भी उन विशेषाधिकारों को रखना संभव हो सकता है।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** श्रीमान, संशोधन सं. 419 में, "Provincial Parliament" ये शब्द हैं। यह मुद्रण की त्रुटि है। यहां 'Provincial' नहीं, 'Provisional' शब्द होना चाहिये। यह अलग संशोधन है जिसे किसी ने भी पेश नहीं किया है। क्या मैं इसे पेश कर सकता हूं?

***अध्यक्ष:** मेरे विचार में अंतर्कालीन (Provisional) संसद को वे सब शक्तियां तथा विशेषाधिकार होंगे जो स्थायी संसद को होंगे। अत: यह प्रश्न वास्तव में नहीं उठता।

***श्री महावीर त्यागी:** क्या हम यह शक्ति संसद पर ही नहीं छोड़ सकते कि वही विनिश्चय कर ले?

***अध्यक्ष:** अनुच्छेद में यही तो लिखा है। संसद ही शक्तियों तथा विशेषाधिकारों को परिभाषित करेगी, किन्तु जब तक संसद इस विषय में विधान पारित न करे तब तक हाउस ऑफ कामन्स के विशेषाधिकार तथा शक्तियां ही लागू होंगी। अत: यह केवल अस्थायी बात है। हां, हो सकता है कि संसद इस विषय पर कभी भी विधान न बनाये और इसलिये सदस्यों को सावधान होना चाहिये।

***श्री एच.वी. कामत:** क्या अंतर्कालीन संसद को अधिकार होगा कि इन शक्तियों को परिभाषित कर दे?

***अध्यक्ष:** निस्संदेह, उसे अधिकार होगा, यदि वह चाहे।

***श्री बी. दास:** श्रीमान, इस संशोधन सं. 419 में, 'Provincial' संसद है या 'Provisional' संसद है?

***अध्यक्ष:** यह गलती है। 'Provisional' संसद होना चाहिये। जब श्री ब्रजेश्वर प्रसाद ने यह गलती बताई थी तो मैं उनकी बात को समझा नहीं था। यह मुद्रण की गलती है। अतएव, अंतर्कालीन संसद को वही अधिकार है जो स्थायी संसद को है। क्या इस पर वाद-विवाद आवश्यक है? अत:, मैं संशोधन पर मत लेता हूं।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 85 के खंड (3) के स्थान पर निम्न खंड रख दिया जाये:—

'(3) In other respects, the privileges, immunities and powers of each House of Parliament and of the members and the

[अध्यक्ष]

committees of each House shall be such as may from time to time be defined by Parliament by law, and until so defined, shall be those of the House of Commons of the Parliament of the United Kingdom and of its members and committees at the commencement of this Constitution.'

[(3) अन्य बातों में, संसद के प्रत्येक सदन की तथा प्रत्येक सदन के सदस्यों और समितियों की शक्तियां, विशेषाधिकार और उन्मुक्तियां ऐसी होंगी; जैसी संसद, समय-समय पर, विधि द्वारा परिभाषित करे, तथा जब तक इस प्रकार परिभाषित नहीं की जातीं, तब तक वे ही होंगी जो इस संविधान के प्रारंभ पर इंगलिस्तान की पार्लियामेंट के हाउस ऑफ कामन्स की तथा उसके सदस्यों और समितियों की हैं।]"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 111

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 111 के खंड (1) के परन्तुक के स्थान पर निम्न परन्तुक रख दिया जाये:–

'Provided that no appeal shall lie to the Supreme Court from the judgment, decree or final order of one judge of a High Court.'

[किन्तु उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश के निर्णय, आज्ञप्ति या अंतिम आदेश की कोई अपील उच्चतम न्यायालय को नहीं जायेगी।]"

इससे वर्तमान स्थिति स्पष्ट हो जाती है। वर्तमान उपबन्ध कुछ लम्बा चौड़ा है। वर्तमान उपबन्ध, जिसे यह संशोधन हटाना चाहता है, यह है:—

"Provided that no appeal shall lie to the Supreme Court from the judgment, decree or order of one judge of a High Court or of one judge of a Division Court thereof, or of two or more judges of a High Court, or of a Division Court constituted by two or more judges of a High Court, where such judges are equally

divided in opinion and do not amount in number to a majority of the whole of the judges of the High Court at the time being.' "

यह अनुभव किया जाता है कि यह आवश्यक नहीं है क्योंकि यह मूल लेटर्स पेटेंट से लिया गया था, जिसका संशोधन 1928 में हो चुका था। संशोधित लेटर्स पेटेंट, जिस रूप में वह हमारे न्यायालयों में लागू था, इस लम्बे चौड़े परन्तुक से आसान है, और उसका आशय लगभग वही था जो हम अनुच्छेद 111 के परन्तुक के रूप में रखना चाहते हैं, पुराने परन्तुक का आशय नहीं था। मैं नहीं समझता कि इस मामले विशेष में वाद-विवाद की कोई गुंजाइश है, क्योंकि इस संशोधन का उद्देश्य उस सीमा को, जो उच्चतम न्यायालय को जाने वाली अपीलों के विषय में रखी गई थी, अधिक आसान बनाना तथा निर्बन्धित करना है। यदि माननीय सदस्य इस स्पष्टीकरण से संतुष्ट हैं तो यह स्वीकृत हो सकता है। किन्तु यदि वे समस्त प्रश्न का स्पष्टीकरण चाहते हैं कि उच्च न्यायालयों में न्याय-मंडलियों की शक्तियों पर लेटर्स पेटेन्ट का क्या प्रभाव पड़ा था और हमने उसमें से क्या-क्या चीजें ली हैं तो, मेरे विचार में, मेरे माननीय साथी श्री अलादि कृष्णस्वामी अय्यर इस विषय में सदस्यों को संतुष्ट करने के लिये तैयार हैं।

श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव करता हूं।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 111 के खंड (1) के परन्तुक के स्थान पर निम्न परन्तुक रख दिया जाये:-

'Provided that no appeal shall lie to the Supreme Court from the judgment, decree or final order of one judge of a High Court.'

[किन्तु उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश के निर्णय, आज्ञप्ति या अंतिम आदेश की कोई अपील उच्चतम न्यायालय को नहीं जायेगी।]"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 112 तथा 203

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 15 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 364 के निर्देश से, अनुच्छेद 112 के स्थान पर निम्न अनुच्छेद रख दिया जाये:-

'112. (1) The Supreme Court may, in its discretion, grant special leave to appeal from any judgment, decree, determination, sentence or order in any cause or matter passed or made by any court or tribunal in the territory of India. Special leave to appeal by the Supreme Court.

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

(2) Nothing in clause (1) of this article shall apply to any judgment, determination, sentence or order passed or made by any court or tribunal constituted by or under any law relating to the Armed Forces.'

अपील के लिए उच्चतम न्यायालय की विशेष इजाजत

[112. (1) उच्चतम न्यायालय, स्वविवेक से, भारत राज्य-क्षेत्र में के किसी न्यायालय या न्यायाधिकरण द्वारा किसी वाद या विषय में दिये हुए किसी निर्णय, आज्ञप्ति, निर्धारण, दण्डादेश या आदेश की अपील के लिये विशेष इजाजत दे सकेगा।

(2) सशस्त्र बलों से सम्बद्ध किसी विधि के द्वारा या अधीन गठित किसी न्यायालय या न्यायाधिकरण द्वारा पारित या दत्त किसी निर्णय, निर्धारण, दण्डादेश या आदेश को खंड (1) की कोई बात लागू न होगी।]"

अनुच्छेद 112 के खंड (1) पर मेरा संशोधन बहुत सादा है। इसका उद्देश्य यह है कि मूल अनुच्छेद में 'final order' इन शब्दों को हटा दिया जाये, और 'determination, sentence or order' ये शब्द प्रविष्ट कर दिये जायें। जहां तक खंड (2) का सम्बन्ध है, यह संशोधन माननीय सदस्यों के लिये बिल्कुल स्पष्ट होना चाहिये। इसका उद्देश्य यह है कि उच्चतम न्यायालय के क्षेत्राधिकार से (जो उसे अनुच्छेद 112 द्वारा दिया गया है) सैनिक न्यायालय के विनिश्चयों को निकाल दिया जाये जो सशस्त्र बलों से सम्बद्ध मामलों के विषय में हों या सेना अधिनियम से शासित मामलों के विषय में हों। मैं समझता हूं कि यही स्थिति संयुक्त राज्य ब्रिटेन में है जहां न्यायालय सैनिक-न्यायालयों के निर्णयों में हस्तक्षेप नहीं करते। मुझे एकदम स्वीकार करना पड़ेगा कि जब यह अनुच्छेद तैयार हुआ था तथा सदन के समक्ष पेश किया था तब यह बात हमारे ध्यान में नहीं आई थी, किन्तु अब प्रतिरक्षा विभाग ने इस ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है तथा उन्होंने हमें विश्वास दिला दिया है कि ऐसा उपबन्ध, जो अन्य देशों में लागू है, हमारे संविधान में भी होना ही चाहिये।

श्रीमान, यदि आप मुझे अनुमति देंगे तो मैं एक और अनुच्छेद भी पेश करना चाहता हूं जो इसी विषय में है, ताकि सारे मामले पर एक साथ ही विचार किया जा सके।

श्रीमान, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 203 में, निम्न खंड जोड़ दिया जाये:

(4) Nothing in this article shall be deemed to extend the powers of superintendence of a High Court over any court or tribunal constituted by or under any law relating to the Armed Forces.'

[(4) इस अनुच्छेद की कोई बात उच्च न्यायालय को सशस्त्र बलों सम्बन्धी विधि के द्वारा या अधीन गठित किसी न्यायालय या अधिकरण पर अधीक्षण की शक्तियां देने वाली न समझी जायेगी।]"

अनुच्छेद 203 का खंड (4) तथा अनुचछेद 112 का खंड (2) उसी विषय में है। अनुच्छेद 203 के विषय में इसका उद्देश्य सैनिक न्यायालयों पर उच्च न्यायालयों के क्षेत्राधिकार का वर्जन करना है, जबकि उच्चतम न्यायालय के विषय में ऐसा ही निर्बंधन अनुच्छेद 112 के अधीन लगाया जाना है। इन दो नये संशोधनों को पेश करने का कारण प्रतिरक्षा मंत्रालय द्वारा अभिव्यक्त विचार हैं कि सैनिक न्यायालयों के विनिश्चयों के विषय में ऐसा रक्षण आवश्यक है क्योंकि वे न्यायालय सशस्त्र बलों के विषय में होते हैं और अन्य देशों में जो कुछ होता है उनका उदाहरण हमारे समक्ष पेश किया गया था। अतः हमने अनुभव किया कि अनुच्छेद 112 तथा 203 में ऐसा उपबन्ध रखना ठीक प्रतीत होता है।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** श्रीमान, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 421 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 112 के खंड (2) को हटा दिया जाये।"

मैं इस विषय में डॉ. अम्बेडकर के विरुद्ध विश्वासघात का आरोप लगाना चाहता हूं। कुछ समय पूर्व मैंने अनुच्छेद 112क पर एक संशोधन पेश किया था जिसमें मैं विशेषतः यह चाहता था कि ऐसा उपबन्ध रखा जाये कि सैनिक न्यायालयों द्वारा मृत्यु दण्ड प्राप्त व्यक्ति उच्चतम न्यायालय को अपील कर सकें। डॉ. अम्बेडकर ने मुझे आश्वासन दिया था कि ऐसे व्यक्ति अनुच्छेद 112 के अंतर्गत आ जाते हैं और उच्चतम न्यायालय अनुच्छेद 112 के अधीन दी गई शक्तियों के अंतर्गत उन व्यक्तियों पर ध्यान दे सकता है। शायद इस सदन की चर्चा पत्रों में छपी थी और प्रतिरक्षा विभाग ने, सैनिक न्यायालयों द्वारा मृत्यु दंड प्राप्त लोगों का इस अनुच्छेद से जो रक्षण होगा, उसके विरुद्ध अपने हाथ मजबूत करने चाहे हैं। श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने अभी कहा है कि यह आवश्यक है क्योंकि प्रतिरक्षा विभाग ऐसा चाहता है। शायद उन्होंने यहां के वाद-विवाद की रिपोर्ट पढ़ ली है और इसलिये उन्होंने इस उपबन्ध की मांग की है।

अतएव, मेरे विचार में, श्रीमान, यह उचित नहीं है। मैंने अपना संशोधन उस दिन इसी आश्वासन पर वापिस ले लिया था कि वह इस अनुच्छेद में आ जायेगा, और अब बिल्कुल उल्टा उपबन्ध रखा जा रहा है और वह स्वीकार होने वाला है। मैंने कई न्यायाधीश-अधिवक्ताओं को देखा है तथा सुना है जो इन सैनिक न्यायालयों से सम्बद्ध होते हैं और वे कहते हैं कि वे ही अभियोजन की तैयारी करते हैं और वे ही मुकदमों को सुनते हैं और फिर निर्णय देते हैं, और यदि कोई न्यायाधीश-अधिवक्ता अपने ही तैयार किये हुए मुकदमों के विरुद्ध प्रायः विनिश्चय करे तो सैनिक प्राधिकारी उसे ही हटा देते हैं। वे इस बात को पसन्द नहीं करते कि इन मुकदमों को खारिज किया जाये। मेरे विचार में, श्रीमान, यह गम्भीर मामला है। हाल ही में युद्ध के पश्चात् ब्रिटेन में भी इन सैनिक न्यायालयों के प्रशासन पर गौर करने के लिये एक आयोग नियुक्त किया गया था तथा उसने भी यह सिफारिश की थी कि प्रक्रिया को अधिक सभ्य बना देना चाहिये और अनुशासन के नाम में लोगों की हत्या नहीं की जानी चाहिये। मैंने देखा है कि न्यायाधीश अधिवक्ताओं की वर्तमान प्रक्रिया न्याय-सिद्धान्त के सब नियमों के विरुद्ध

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

है और मेरे विचार में जिन लोगों को मृत्यु दण्ड दिया जाये उन्हें तो अवश्य ही उच्चतम न्यायालय में अपील करने का अधिकार होना चाहिये। मेरे विचार में यह उपबन्ध अन्याया पूर्ण ही नहीं है, वरन् उस वचन के भी विरुद्ध है जो डॉ. अम्बेडकर ने मुझे पहले दिया था।

***श्री आर.के. सिधवा:** अध्यक्ष महोदय, मुझे इस खंड के विषय में संदेह है। मैं इस बात पर सर्वथा सहमत हूं कि सशस्त्र बलों को रक्षण दिया जाना चाहिये और कि सैनिक विधि का पुनरीक्षण उच्चतम न्यायालय द्वारा नहीं होना चाहिये। उस हद तक मैं सहमत हूं, किन्तु मैं बहुत से मामले बता सकता हूं जिनमें बहुत से सशस्त्र बलों का बहुत से नागरिक लोगों से संघर्ष हुआ था। श्रीमान, बहुत से सैनिक मोटर-चालकों के मामले थे जिन्होंने दुर्घटनाएं करके कई नागरिकों को मार डाला था और उन पर सैनिक न्यायालयों द्वारा मुकदमे चलाये गये जब 90 प्रतिशत मामलों में बेचारे असैनिकों को ही हानि उठानी पड़ी। उन्हें कोई प्रतिकर या न्याय प्राप्त नहीं हुआ और न सैनिक चालक को ही किसी तरह कोई दण्ड दिया गया। अतएव मेरा कहना यह है कि मसौदा समिति नगर की जनता के हित में कृपया इस बात का ध्यान रखे और यहां कोई प्रबन्ध या उपबन्ध कर दे कि इन दुर्घटनाओं से हानि उठाने वाली जनता की रक्षा की जा सके। उन पर सैनिक विधि से मुकदमा नहीं चलना चाहिये। मैं बहुत से मुकदमों के हवाले दे सकता हूं और यदि इन मुकदमों को असैनिक न्यायालयों में पेश किया जाता तो उचित न्याय हो सकता था। व्यवहार तथा दण्ड न्यायालयों में उन्हें प्रतिकर मिल जाता है और वहां दोषी को दण्ड दिया जाता है। इसी त्रुटि के कारण कई चालक इतने तेज चलाते हैं कि वे कई नागरिकों को मार डालते हैं। मैं माननीय डॉ. अम्बेडकर का ध्यान इस मामले की ओर आकृष्ट करना चाहता हूं। शायद इस मामले पर पहले उनका ध्यान नहीं गया, किन्तु वह बहुत महत्वपूर्ण मामला है और हम सशस्त्र बलों की रक्षा तो करना चाहते हैं और उनकी अपील उच्चतम न्यायालय को नहीं आनी चाहिये, किन्तु असैनिकों की भी समान रूपेण रक्षा करनी चाहिये।

***श्री बी. दास:** मैं चाहता हूं कि डॉ. अम्बेडकर इस बात को स्पष्ट कर दें कि भारत के राज्य-क्षेत्र में न्यायाधिकरण का अर्थ आय-कर न्यायाधिकरण से है या विविध लेख न्यायाधिकरणों से है। यदि शक्ति का विस्तार किया जाये तो आयकर न्यायाधिकरण को एक दम विघटित कर दिया जाना चाहिये। हमारे यहां आयकर न्यायाधिकरण है जो अंतिम प्राधिकारी है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** क्या ये बातें प्रसंगानुकूल हैं? आयकर न्यायाधिकरण कहां से आ गया?

***श्री बी. दास:** इस अनुच्छेद में लिखा है:

" 'The Supreme Court may, in its discretion, grant special leave to appeal from any judgment, decree, determination, sentence or order in any cause or matter passed or made by any court or tribunal in the territory of India.'

[उच्चतम न्यायालय स्वविवेक से भारत राज्य-क्षेत्र में के किसी न्यायालय या न्यायाधिकरण द्वारा किसी वाद या विषय में दिये हुए किसी निर्णय, आज्ञप्ति, निर्धारण, दण्डादेश या आदेश की अपील के लिये विशेष इजाजत दे सकेगा।]"

मैं आपसे केवल यह आश्वासन चाहता हूं कि 'न्यायाधिकरण' का अर्थ आयकर न्यायाधिकरण नहीं है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** आपने अन्य व्यक्तियों के विषय में भी कहा था। जहां तक मुझे याद है, इसका संशोधन इस लिये किया गया था कि आयकर के मामले भी उच्चतय न्यायालय में जा सकें। मैं जानता हूं कि इसमें संशोधन किया गया है।

***पं. ठाकुरदास भार्गवः** श्रीमान, मेरे विचार में खंड (2) अत्यन्त विस्तृत तथा अनावश्यक दिखाई देता है। वह इस प्रकार है:

" 'Nothing in clause (1) of this article shall apply to any judgment, determination, sentence or order passed or made by any court or tribunal constituted by or under any law relating to the Armed Forces.

[सशस्त्र बलों से सम्बद्ध किसी विधि के द्वारा या अधीन गठित किसी न्यायालय या न्यायाधिकरण द्वारा पारित या दत्त किसी निर्णय, निर्धारण, दंडादेश या आदेश को खंड (1) की कोई बात लागू नहीं होगी।]"

जहां तक सैनिक व्यक्तियों और सैनिक अपराधों का सम्बन्ध है, वे उच्चतम न्यायालय के क्षेत्राधिकार से विमुक्त रह सकते हैं; किन्तु सशस्त्र बलों के विषय में बहुत-सी विधियां हैं जो इन अधिनियमों के अधीन उन मुकदमों के विषय में हैं जिनमें अभियुक्त असैनिक लोग होते हैं या ऐसे सैनिक व्यक्ति होते हैं जो असैनिक अपराधों के दोषी हों। उदाहरण के लिये, कटक क्षेत्र अधिनियम के विषय में या प्रादेशिक बल अधिनियम के विषय में, कुछ ऐसे अपराध हैं जिनमें असैनिक लोग अभियुक्त होते हैं और कोई कारण नहीं है कि ऐसे दण्डादेश उच्चतम न्यायालय के क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत न हों। अतः मेरे विचार में, इस खंड की भाषा बहुत विस्तृत है और उसमें संशोधन की आवश्यकता है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** अध्यक्ष महोदय, मेरे माननीय मित्र प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना ने जो बातें कहीं हैं उन्हें देखते हुए, मेरे लिये यह आवश्यक हो गया है कि मेरे माननीय मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी द्वारा प्रस्तावित संशोधन के विषय में मैं कुछ कहूं। यह सर्वथा सत्य है कि जब हमने अनुच्छेद 112 पर विचार किया था तथा मेरे माननीय मित्र प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना ने संशोधन पेश किया था, उस समय मैंने यह अवश्य कहा था कि अनुच्छेद 112 के अधीन उच्चतम न्यायालय को क्षेत्राधिकार होगा कि वह सैनिक न्यायालय के आदेश के विरुद्ध अपील को सुन सके। सिद्धान्त में वह बात अब भी ठीक है और मुझे इस विषय में कोई संदेह नहीं है, किन्तु मैं केवल यही बात कहना

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

भूल गया था कि हमारे उच्च न्यायालयों तथा ब्रिटिश न्यायालयों तथा प्रिवी परिषद् के निर्णयों के अनुसार यह सुमान्य सिद्धान्त है कि यद्यपि असैनिक न्यायालयों को विधि के अधीन क्षेत्राधिकार प्राप्त है पर वे सैनिक न्यायालय के निर्णय या आदेश को उलटने के लिये उसका प्रयोग नहीं करेंगे। मैं उन कारणों पर यहां कुछ नहीं कहना चाहता कि उच्चतर प्राधिकार वाले असैनिक न्यायालयों ने यह क्यों कहा है कि उन्हें क्षेत्राधिकार प्राप्त होते हुए भी वे उसका प्रयोग नहीं करेंगे, किन्तु तथ्य तो यही है और मैंने सोचा था कि यदि हमारे भारत के न्यायालय भी उसी विनिश्चय कर चलें जो ब्रिटिश न्यायालयों ने दिया है—लार्ड सभा, बादशाह की मंडली डिवीजन तथा प्रिवी परिषद् ने भी यही निर्णय दिया है और मैं यह भी कह सकता हूं कि हमारे फेडरल न्यायालय ने भी दो तीन मामलों में यही निर्णय दिया है–तो खंड (2) की आवश्यकता ही नहीं रहेगी; किन्तु दुर्भाग्य से प्रतिरक्षा मंत्रालय यह अनुभव करता है कि ऐसे महत्वपूर्ण मामले को संदेह की स्थिति में नहीं छोड़ना चाहिये और विधि रूप उपबन्ध होना चाहिये कि कोई असैनिक न्यायालय—चाहे उच्च न्यायालय हो या उच्चतम न्यायालय हो—किसी ऐसे न्यायालय या न्यायाधिकरण के विषय में, जो सशस्त्र बलों सम्बन्धी विधि के अधीन बना हो, ऐसे क्षेत्राधिकार का प्रयोग नहीं करेगा।

यह प्रश्न केवल परिकल्पना का ही नहीं है, वरन् इसका बहुत क्रियात्मक महत्व है क्योंकि इसमें सशस्त्र बलों के अनुशासन का प्रश्न अंतर्ग्रस्त है। यदि सशस्त्र बलों के विषय में कोई चीज आवश्यक है तो वह अनुशासन है। प्रतिरक्षा मंत्रालय यह अनुभव करता है कि यदि सशस्त्र बलों का कोई व्यक्ति उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालय से यह आशा कर सकता है कि वह ऐसे न्यायालय या न्यायाधिकरण के विनिश्चय के विरुद्ध उसकी सहायता कर सकता है जो सशस्त्र बलों में अनुशासन रखने के लिये बनाया गया है, तो अनुशासन समाप्त ही हो जायेगा। मुझे कहना होगा कि यह ऐसी युक्ति है जिसका कोई उत्तर नहीं है। इसी कारण इस संशोधन विशेष द्वारा अनुच्छेद 112 में खंड (2) को जोड़ दिया गया है और उच्च न्यायालयों की अधीक्षण की शक्तियों विषयक उपबंधों में भी ही उपबन्ध जोड़ दिया गया है। अनुच्छेद 112 में खंड (2) जोड़ने के लिये मेरा यही औचित्य है।

किन्तु मैं यह भी कहना चाहता हूं कि इस खंड (2) से उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालय की शक्तियां पूर्णतः समाप्त नहीं हो जातीं। विधि सशस्त्र बलों के सदस्य को पूरी तरह उस विधि विशेष के अधीन निर्मित न्यायाधिकरण की ही कृपा पर नहीं छोड़ देती है। क्योंकि, अनुच्छेद 112 के खंड (2) के होते हुए भी उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालय को क्षेत्राधिकार के प्रयोग का अधिकार होगा, यदि सैनिक न्यायालय उस क्षेत्राधिकार से आगे बढ़ जाये जो उसे सशस्त्र बलों सम्बन्धी विधि द्वारा प्रदत्त है। उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालय को इस प्रश्न पर विचार करने का अधिकार होगा कि क्या क्षेत्राधिकार का प्रयोग उस विधि के अंतर्गत किया गया है जिससे यह न्यायालय या न्यायाधिकरण बना था। दूसरी बात यह है कि यदि सैनिक न्यायालय साक्ष्य के बिना भी निर्णय दे दे तो भी उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालय को अपील पर विचार करने का अधिकार

होगा ताकि वह मालूम कर सके कि साक्ष्य है या नहीं। हां, उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालय को इस बात पर विचार करने का अधिकार नहीं होगा कि साक्ष्य पर्याप्त है या नहीं है। यह मामला इन न्यायालयों के क्षेत्राधिकार से बाहर है। साक्ष्य है या नहीं, इस मामले पर वे विचार कर सकते हैं। इसी प्रकार मैं कह सकता हूं कि सशस्त्र बलों के व्यक्ति को अधिकार होगा कि वह न्यायालयों से अपील कर सके कि वे लेख निकाल कर वह विचार कर सकें कि क्या उसके विरुद्ध सैनिक न्यायालय की कार्यवाहियां संसद-निर्मित किसी विधि के अधीन की गई हैं या वे मनमानी हैं। अतः मेरे विचार में, प्रतिरक्षा मंत्रालय द्वारा उठाई गई कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुए, यह अनुच्छेद आवश्यक है। इससे ऐसे नियम को मान्यता मात्र दी गई है जो पहले ही लागू है और जिसे समस्त बड़े न्यायालयों ने मान्यता दी है, इससे कुछ अधिक नहीं होता।

मुझे बताया गया है कि कुछ लोग सशस्त्र बलों सम्बन्धी विधि के विषय में कठिनाई अनुभव करते हैं। कहा जाता है कि सशस्त्र बलों में कई ऐसे व्यक्ति हैं जो वास्तव में 'मोर्चे वाले व्यक्ति' नहीं हैं, वे मोर्चे से पीछे रहते हैं। मुझे उन लोगों में विभेद करना असम्भव दिखाई देता है जो वास्तव में शस्त्र धारण करते हैं और अन्य लोग जो सेना अधिनियम के अधीन भर्ती किये जाते हैं, क्योंकि सशस्त्र बलों में अनुशासन इतना ही आवश्यक है जितना उन लोगों में अनुशासन बनाये रखना आवश्यक है जो सशस्त्र बलों में समाविष्ट नहीं हैं।

मेरे माननीय मित्र श्री सिधवा ने यह प्रश्न उठाया है कि कभी सशस्त्र बलों का कोई सदस्य कोई अपराध कर देता है, तेज सवारी चला कर या और काम करके किसी को मार डालता है तो उस पर प्रायः सैनिक न्यायालय में मुकदमा चलता है और उसे साधारण दंड विधि न्यायालय के समक्ष लाने के लिये कोई कार्यवाही नहीं की जाती। खैर, मुझे पता नहीं है, किन्तु मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि जहां तक सशस्त्र बलों के सदस्य का सम्बन्ध है वह दुहरे क्षेत्राधिकार के अधीन होता है। निस्संदेह वह सैनिक विधि के अधीन निर्मित न्यायालय के क्षेत्राधिकार के अंतर्गत है। साथ ही वह देश की सामान्य विधि से विमुक्त नहीं है। उदाहरण के लिये यदि कोई व्यक्ति ऐसा अपराध करता है जो भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत अपराध है और सेना अधिनियम के अधीन भी अपराध है तो उस पर दोनों अधिनियमों के अधीन मुकदमा चल सकेगा। यदि सेना का कोई सदस्य ऐसे मुकदमे से बच गया है तो इसका यही कारण है कि लोगों ने उस मामले का पीछा नहीं पकड़ा। विधि की सामान्य परिकल्पना यह है कि कोई व्यक्ति सशस्त्र बलों का सदस्य बन जाने से देश की सामान्य विधि के क्षेत्राधिकार से नहीं बच जाता। वह उसके अधीन रहता है, किन्तु उसके अतिरिक्त उस पर उस अधिनियम का दायित्व भी आ पड़ता है जिसके अधीन वह भर्ती हुआ है।

***श्री महावीर त्यागीः** क्या उसे एक ही अपराध के लिये दो दण्ड मिल सकते हैं?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** हां, हां।

***श्री आर.के. सिधवाः** इसे स्पष्ट क्यों नहीं कर देते?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** यह बिल्कुल स्पष्ट है। भारतीय दंड संहिता की धारा (2) में लिखा है। "प्रत्येक व्यक्ति"। "प्रत्येक व्यक्ति" का अर्थ है ऊंचा या नीचा सशस्त्र या शस्त्रहीन।

***अध्यक्षः** श्री टी.टी. कृष्णमाचारी। क्या आप इसके पश्चात् कुछ कहना चाहते हैं?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** नहीं, श्रीमान्

***अध्यक्षः** मैं संशोधनों पर मत लेता हूं।

प्रश्न यह है:

"कि सूची 18 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 421 में, प्रस्थापित अनुच्छेद 112 के खंड (2) को हटा दिया जाये।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** मैं संशोधन सं. 421 में प्रस्थापित अनुच्छेद 112 पर मत लूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि सूची 15 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन सं. 364 के निर्देश से, अनुच्छेद 112 के स्थान पर निम्न अनुच्छेद रख दिया जाये:—

'112. (1) The Supreme Court may, in its discretion, grant special leave to appeal from any judgment, decree, determination, sentence or order in any cause or matter passed or made by any court or tribunal in the territory of India.

Special leave to appeal by the Supreme Court.

(2) Nothing in clause (1) of this article shall apply to any judgment, determination, sentence or order passed or made by any court or tribunal constituted by or under any law relating to the Armed Forces.'

[112. (1) उच्चतम न्यायालय, स्वविवेक से, भारत राज्य-क्षेत्र में के किसी न्यायालय या न्यायाधिकरण द्वारा किसी वाद या विषय में दिये हुए किसी निर्णय, आज्ञप्ति, निर्धारण, दण्डादेश या आदेश की अपील के लिये विशेष इजाजत दे सकेगा।

अपील के लिए उच्चतम न्यायालय की विशेष इजाजत।

(2) सशस्त्र बलों से सम्बद्ध किसी विधि के द्वारा या अधीन गठित किसी न्यायालय या न्यायाधिकरण द्वारा पारित या दत्त किसी निर्णय, निर्धारण, दण्डादेश या आदेश को खंड (1) की कोई बात लागू न होगी।]"

प्रस्ताव स्वीकृत हो गया।

अनुच्छेद 112, संशोधित रूप में, संविधान में जोड़ दिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 203 में, निम्न खंड जोड़ दिया जाये:—

'(4) Nothing in this article shall be deemed to extend the powers of superintendence of a High Court over any court or tribunal constituted by or under any law relating to the Armed Forces.'

[(4) इस अनुच्छेद की कोई बात उच्च न्यायालय को सशस्त्र बलों सम्बन्धी विधि के द्वारा या अधीन गठित किसी न्यायालय या न्यायाधिकरण पर अधीक्षण की शक्तियां देने वाली न समझी जायेगी।]"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 122क

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 122क में, 'In this Chapter' इन शब्दों के पश्चात्, 'and in Chapter VII of Part VI of this Constitution' ये शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

यह बहुत साधारण-सा मामला है। अनुच्छेद 122क में संविधान के निर्वचन का विषय है, जहां तक उच्चतम न्यायालय का सम्बन्ध है। अब हम यह कहना चाहते हैं कि यह खण्ड उच्च न्यायालय विषयक अध्याय पर भी लागू होगा, जहां तक विधि के सारवान प्रश्न के निर्देश से संविधान के निर्वचन का सम्बन्ध है। यह ऐसी भूल है जिस पर उस समय ध्यान नहीं गया था अब यह अनुच्छेद पारित किया गया था और यह ऐसा मामला नहीं है जिसमें कोई सारवान प्रश्न अंतर्ग्रस्त हो। यह तो उस भूल का ही सुधार करना है।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 122क में, 'In this Chapter' इन शब्दों के पश्चात्, 'and in Chapter VII of Part VI of this Constitution' ये शब्द प्रविष्ट कर दिये जायें।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 130

***अध्यक्ष:** हम अनुच्छेद 130 को लेते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 130 के खंड (1) में, 'may be exercised by him' इन शब्दों के स्थान पर, 'shall be exercised, by him either directly or through officers subordinate to him' ये शब्द रख दिये जायें।"

श्रीमान, आज सदन ने अनुच्छेद 42 के विषय में जो राष्ट्रपति के विषय में है, कुछ चर्चा के पश्चात् एक ऐसा ही अनुच्छेद पारित किया है। हम राज्यपाल की कार्यपालिका शक्तियों के विषय में भी ऐसे ही शब्द रखना चाहते हैं।

***अध्यक्ष:** श्री कामत का दूसरे अनुच्छेद पर एक संशोधन था। शायद इस पर भी ऐसा संशोधन है। क्या इस पर चर्चा करना आवश्यक है?

***श्री एच.वी. कामत:** मेरे विचार में वे गलती को दोहरा रहे हैं। मैं अपने संशोधन को पेश नहीं करता।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 130 के खंड (1) में, 'may be exercised by him' इन शब्दों के स्थान पर, 'shall be exercised by him either directly or through officers subordinate to him' ये शब्द रख दिये जायें।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 169

***अध्यक्ष:** हम अनुच्छेद 169 को लेते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 169 के खंड (3) के स्थान पर, निम्न खंड रख दिया जाये:–

'(3) In other respects, privileges, immunities and powers of a House of the Legislature of a State and of the members and the committees of a House of such Legislature shall be such as may from time to time be defined by the Legislature by law, and until so defined, shall be those of the House of Commons of the Parliament of the United Kingdom and of its members and committees at the commencement of this Constitution.'

[(3) अन्य बातों में राज्य के विधान-मंडल के प्रत्येक सदन की, ऐसे विधान मंडल के तथा प्रत्येक सदन के सदस्यों और समितियों की, शक्तियां, विशेषाधिकार और उन्मुक्तियां ऐसी होंगी, जैसी वह विधान-मंडल, समय-समय पर, विधि द्वारा परिभाषित करे, तथा जब तक इस प्रकार परिभाषित नहीं की जातीं तब तक वे ही होंगी जो इस संविधान के आरम्भ पर इंग्लिस्तान की पार्लियामेंट के हाउस ऑफ कामन्स की तथा उसके सदस्यों और समितियों की हैं।]"

यह उसी संशोधन के समान है जो अनुच्छेद 85 के खंड (3) पर प्रस्तावित किया गया था और सदन ने उसे स्वीकार किया था और हमारा उद्देश्य विधान-मंडल के सदनों की शक्तियों के विषय में, विधान-मंडलों के सदनों की समितियों के सदस्यों की शक्तियों और विशेषाधिकारों और उन्मुक्तियों के विषय में ऐसे ही उपबन्ध रखना है।

***अध्यक्ष:** हमने संसद के विषय में अभी ऐसा ही उपबन्ध पारित किया है। यह राज्यों के विधान मंडलों के सम्बन्ध में है।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 162 के खंड (3) के स्थान पर, निम्न खंड रख दिया जाये:—

'(3) In other respects, privileges, immunities and powers of a House of the Legislature of a State and of the members and the committees of a House of such Legislature shall be such as may from time to time be defined by the Legislature by law, and until so defined, shall be those of the House of Commons of the Parliament of the United Kingdom and of its members and committees at the commencement of this Constitution.' "

[(3) अन्य बातों में राज्य के विधान-मंडल के प्रत्येक सदन की, ऐसे विधान मंडल के तथा प्रत्येक सदन के सदस्यों और समितियों की, शक्तियां, विशेषाधिकार और उन्मुक्तियां ऐसी होंगी, जैसी वह विधान-मंडल, समय-समय पर, विधि द्वारा परिभाषित करे, तथा जब तक इस प्रकार परिभाषित नहीं की जातीं तब तक वे ही होंगी जो इस संविधान के आरम्भ पर इंग्लिस्तान की पार्लियामेंट के हाउस ऑफ कामन्स की तथा उसके सदस्यों और समितियों की हैं।]"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 213क

***अध्यक्ष:** हम अनुच्छेद 213क को लेते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 213क के खंड (1) में, 'for the purposes of this Constitution' इन शब्दों के स्थान पर 'for all or any of the purposes of this Constitution' ये शब्द रख दिये जायें।"

यह संशोधन प्रथम अनुसूची के भाग 2 के राज्यों के उच्च न्यायालयों के सम्बन्ध में है और यह भाषा मूल भाषा का विस्तार मात्र है और इस विस्तार पर कोई आपत्ति नहीं हो सकती। मुझे वैधानिक परामर्शदाताओं ने मंत्रणा दी है कि यह आवश्यक है अत: यह संशोधन पेश किया जा रहा है।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** मुझे भय है कि हम बहुत से व्यर्थ संशोधन रख रहे हैं।

***अध्यक्ष:** क्या कोई कुछ कहना चाहता है? श्री सन्तानम् का ख्याल है कि यह अनावश्यक है और पं. भार्गव का भी यही ख्याल है। श्री कृष्णमाचारी, क्या आप कुछ कहना चाहते हैं?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** इस मामले में मुझे भय है कि हमें अपने परामर्शदाताओं की बात को मानना होगा।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** चाहे उन्होंने मूल प्रारूप में कोई गलती भी कर दी हो फिर भी, जब तक अनिवार्य न हो तब तक हमारे समक्ष इस समय कोई संशोधन पेश नहीं किया जाना चाहिये।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मुझे भय है कि हमने एक अन्य अनुच्छेद में एक और गलती की है यदि मैं अपने माननीय मित्र भी सन्तानम के तर्क को स्वीकार करूं। हमने 303, खंड (1) मद (11) उप-मद (2) में गलती की है। उसमें परिभाषा में लिखा है:

"any other court in the territory of India which may be declared by Parliament by law to be a High Court for all or any of the purposes of this Constitution."

यदि हम उच्च न्यायालय की परिभाषा में ये शब्द रखें तो, चाहे यह इस सदन के माननीय सदस्यों को कितना ही अनावश्यक क्यों न जंचे, फिर भी मैंने सोचा कि इसे उसी परिभाषा के अनुरूप बनाना सबसे अच्छा रहेगा जो इस सदन के अनुच्छेद के निर्वचन में सचमुच मुख्य अंग होगी।

***एक माननीय सदस्य:** यदि वे नितान्त आवश्यक हैं तो उन्हें तीसरे पठन के समय पेश किया जा सकता है।

***अध्यक्ष:** मैं नहीं समझता कि इस पर कोई वास्तविक विरोध है किन्तु सदस्य इसे अनावश्यक समझते हैं:

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 213क के खंड (1) में, 'for the purposes of Constitution' इन शब्दों के स्थान पर 'for all or any of the purposes of this Constitution' ये शब्द रख दिये जायें।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 215 क

***अध्यक्ष:** हम 215क को लेते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 215क को हटा दिया जाये।"

यह अनुच्छेद अनुसूचित और आदिम जातीय क्षेत्रों के विषय में है। वह इस प्रकार है:

"In this Constitution the expression 'scheduled areas' means the areas specified in Parts I to VII of the Table appended to paragraph 18 of the Fifth Schedule in relation to the States to which those parts respectively relate subject to any order made under sub-paragraph (2) of that paragraph."

फिर आदिमजातीय क्षेत्रों की परिभाषा पुन: दी गई है।

श्रीमान, सदन ने पंचम तथा षष्ट अनुसूची पारित कर दी है जिनमें वे सब बातें आ जाती हैं जो अनुच्छेद 215क के दो खंडों में अंतर्विष्ट हैं।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 215क को हटा दिया जाये।"

संशोधन स्वीकृत हो गया।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** प्रस्तावना को लेने से पूर्व एक और मद लेनी है।

***मौलाना हसरत मोहानी** (संयुक्त प्रान्त : मुस्लिम): श्रीमान, मुझे इस पर आपत्ति है कि प्रस्तावना को दिन के अंत में लिया जाये।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** हमने प्रस्तावना को पेश नहीं किया है। मेरा सुझाव है कि अनुच्छेद 13 को कल तक के लिये उठा रखा जाये।

***श्री आर.के. सिधवा:** श्रीमान, आपने 445 को नहीं रखा।

***अध्यक्ष:** यह आज की कार्यावली में नहीं है। मेरे विचार में इसमें, अनुच्छेद 13 के अतिरिक्त, सब अनुच्छेद आ जाते हैं जो आज की कार्यावली में हैं। सुझाव यह है कि हम अनुच्छेद 13 को कल लें क्योंकि कुछ सदस्यों ने संशोधनों की सूचना दी है और वे विचारार्थ कुछ अधिक समय चाहते हैं। श्री सिधवा—क्या आपने 302कक का निदश किया है? यह कल आ रहा है। क्या हम प्रस्तावना को कल ले लें?

***माननीय सदस्यगण:** कल।

***अध्यक्ष:** आज जो पत्र घुमाया गया है उसमें कुछ अन्य अनुच्छेद भी हैं। हमें उन्हें कल प्रस्तावना के साथ ही निबटाना होगा।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** मसौदा समिति विचार कर सकती है कि क्या उनमें से कोई अनिवार्य है; अन्यथा वे आनुषंगिक संशोधनों के रूप में तीसरे पठन में पेश हो सकते हैं। हमें ऐसे संशोधनों पर समय खर्च नहीं करना चाहिये।

***अध्यक्ष:** जो खंड पारित हो चुके हैं उन पर संशोधनों के विषय में अधिक कुछ नहीं है। अन्य सारवान प्रस्थापनायें हैं। हां, मसौदा समिति स्वभावत: विचार तो करेगी ही कि इन संशोधनों पर जोर दिया जाये या नहीं।

***श्री आर.के. सिधवा:** क्या हम यह समझ लें कि कल सायंकाल तक हम सत्र को समाप्त कर देंगे?

***अध्यक्ष:** यह सब आप पर निर्भर है। मसौदा समिति आपसे अलग नहीं है। उसमें सदन के सब शामिल हैं।

तो फिर हम कल किस समय तक के लिये स्थगित होंगे? हम कल कब समवेत् होंगे?

***माननीय सदस्यगण:** कल प्रात:काल, नौ बजे।

***अध्यक्ष:** बहुत अच्छा, यदि सदन की यही इच्छा है तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। हम 9 बजे समवेत् हो सकते हैं, ताकि हमें इसको समाप्त करने के लिये चार घंटे मिल जायें।

सदन कल प्रात: के 9 बजे तक के लिये स्थगित होता है।

तत्पश्चात् सभा सोमवार, तारीख 17 अक्तूबर 1949 के 9 बजे तक के लिये स्थगित हो गई।

GIPD–HS-195 PSD–27-11-52–320.